'मातेश्वरी - राधा''

लेखक

श्री भगवती शरण दास

१३६२-ई. सिविल लाइन,
सीपरी बाजार, झाँसी

"मातेश्वरी - राधा"

लेखक

श्री भगवती शरण दास

१३६२-ई, सिविल लाइन,

सीपरी बाजार, झाँसी

संस्करण : जनवरी २०००

© सर्वाधिकार प्रकाशक के अधीन

प्रकाशक : डा. मनुजी श्रीवास्तव
रीडर एवं विभागाध्यक्ष
हिन्दी विभाग
बुन्देलखण्ड कॉलेज, झाँसी
फोन : ४४७६६६

डिजाइन एवं मुद्रण : यूनिवर्सल प्रेस
११८, चन्द्रशेखर आजाद, गणेश बाजार,
झाँसी
फोन : ४४३११४

परम संत महात्मा भवानीशंकर (चच्चा जी)

की

अमृत वाणी

- जो मनुष्य किसी भी प्राणी का अनिष्ट चिन्तन नहीं करता और अपने से शत्रु भाव रखने वालों की उन्नति पर भी प्रसन्न होता है, वही सदाचारी तथा श्री भगवान का सच्चा भक्त है।
- सदाचार भेदभाव और पक्षपात को छोड़कर सेवा करने की शिक्षा देता है। सदाचार सामाजिक जीवन की कुंजी है।
- निर्दोष तथा पवित्र जीवन ही सच्ची शान्ति है जिसकी प्राप्ति आत्म संयम तथा श्री भगवान की भक्ति से ही प्राप्त होती है।
- निष्काम प्रेमभाव से बिना किसी भेदभाव व पक्षपात के प्रत्येक प्राणी की सेवा करना साक्षात् ईश्वर की सेवा करना है।
- समय को अमूल्य समझकर प्रत्येक श्वांस को भावसहित श्री भगवान के स्मरण तथा ध्यान में लगाये रहने को अभ्यास तथा साधन करने से मनुष्य को सदाचार की प्राप्ति होकर यथार्थ कर्तव्य पालन तथा सेवा करने की शक्ति प्राप्त होती है।

"मातेश्वरी - राधा"

प्रथम योग

(1)

मध्यमाकार सम्पन्ना मुक्तिधात्री महेश्वरी।

पद्मिमपत्राक्षी, पद्मजा पुण्य निर्झरी।।

ब्राह्मि–शोभा शुभा दिव्या, शान्ति–सलिला सुवारिगा।

कृपा करुणा दया युक्ता, दृढ़ा भव तारिणी तरी।।

आराध्या सेव्या सदा, राधा मातु महान हैं।

गुञ्जित महि में व्योम में, उनके ही यश के गान हैं।।

(2)

सुभग मझोलाकार भवानी शम्भु भवानी।

भक्ति शक्ति साकार, मुक्ति धात्री कल्याणी।।

भव्य भाल भव विभव–सच्चिदानन्द प्रकाशी।

जय रवि पावक दीप्ति, चन्द्र–द्युति पूरण मासी।।

जयति पद्म–पत्राक्षि–माँ, राधे पातक नाशिनी।

शान्ति सुधा स्त्रोतस्विनी मुक्ति भुक्ति उल्लासिनी।।

(3)

भजु मन मातु चरण अविनाशी।

जिन की पद पंकज रज–निर्मित अगणित मथुराकाशी।।

दीन दयालु कृप्यमृत प्रगटीं कलि में काम दुधा सी।

जिन की चरण शरण, शरणागत बन जाते शुभ राशी।।

भुक्ति मुक्ति जिनके घर दासी, भक्ति सुकीर्ति प्रकाशी।

भजु मन मातु चरण अविनाशी।।

मातेश्वरी राधा - स्तवनम्

(2)

सेइय मातु चरण मन भावन ।
हरन शोक सन्तापताप–त्रय, कलि मल मूल त्रिशूलनसावन ।।
जिन सेवत विधि भये विदित अज, पतित कोटि भये पावन पावन।
सुयश जासु कह रहे निरन्तर, सूर्य चन्द तारागन धावन।।
जिन के नख सम्भूत गन्धवह–महर महर महकत महकावन।।
गंग तरंग तरंगित छिन–छिन देत त्रिलोकिहि नवल सिरवावन ।।
सेइय मातु चरण मन भावन

गीत

आद्याशक्ति भवानी जय जय जगदम्बे महरानी।
दुर्गतिनाशिनि सुगति प्रकाशिनि, जय राधिके भवानी।।
अम्बुजाक्षि अम्बिके अलौकिक, लौकिक रुप तुम्हारा ।
स्वर्ग तथा अपवर्ग धरा पर तुमने स्वतः उतारा।।
निज भावानुकूल जन जन ने रुप तुम्हारा, देखा।
.इदमित्थं कह सका न कोई हारे सब कर लेखा।।
नेति नेति कह निगम, मौन पंडित ज्ञानी विज्ञानी।
आद्याशक्ति भवानी जय जय जगदम्बे महारानी।।1।।
दृष्टा दर्शन दृश्य सभी को तुमने दिया सहारा।
अस्ति नास्ति दोनों में अनुगत भाव प्रभाव तुम्हारा।।
सब तुम से हैं तुम सब की हो जननी जीवन दात्री।

सब तुम से अवलम्ब मांगते तुम हो सब की धात्री।।
पाहि माम् कह रही कम्पिता रचना रुप गुमानी।
आद्या शक्ति भवानी जय जय जगदम्बे महारानी।।2।।
करुणा कृपा दया सब तुम में रहतीं, शरण तुम्हारी।
द्रवी भूत हो करती रहतीं तुम सबकी रखवारी।।
दास तुम्हारी शरण, भगवती स्नेह सुधा वरसाओ।
दया मया रस दे जगदीश्वरि जन जीवन सरसाओ।।
अपरिमेय तुम अप्रमेय तुम मंत्र मूर्ति शर्वाणी।
आद्याशक्ति भवानी जय जय जगदम्बे महारानी।

"मातेश्वरी राधा"

मैं मातेश्वरी राधा में मातेश्वरी सीता के दर्शन कर चुका हूं । मेरे इस मानवी देह को जन्म देने वाली माता का स्वर्गवास मेरे शैशव काल में ही हो गया मैं तभी से भगवती सीता को अपनी माँ और भगवान राम को अपना पिता मानने लगा था, क्योंकि मेरे पिता श्री का देहावसान मेरे बाल्यकाल में ही हो गया तथा येन केन प्रकारेण मेरा लालन पालन मेरे रिश्ते–नाते दारों द्वारा होता रहा, मुझे मातृ–पितृ हीना अवस्था में किसी अभाव का बोध नहीं हुआ । पैतृक भवन तथा अन्य सम्पत्तियों की ओर से मुझे पूर्ण वैराग्य था मैं जहाँ भी रहा वहीं जो भी प्राप्त हुआ उसे पर्याप्त समझता रहा यत्र सर्व भावेन सन्तुष्ट होकर जीवन यापन करता रहा ।

संयोग वश सन् 1935 ईसवी में परमात्मा स्वरुप परम सन्त महात्मा भवानी शंकरजी महाराज के दर्शन हुये । मुझे स्वतः आभास हुआ कि वे भगवान राम के अवतार हैं, स्वभावतः हृदय में ऐसी भावना घर कर गई

कि परम सन्त महात्मा भवानी शंकर जी की धर्म पत्नी मातेश्वरी राधा भगवती सीता की अवतार हैं । यह भावना इतनी गहराई तक पहुंच गई कि आज तक निकाले नहीं निकली । समयानुसार मातेश्वरी का देहावसान हो गया और अब तो परम–पूज्य चाचाजी महाराज भी मानवी देह त्याग ब्रह्म लीन हो गये हैं, मेरी भावनाओं में कोई अन्तर नहीं आया । मैं अम्माँ जी में सदैव परमात्मा की महा शक्ति का दर्शन करता था और अपने आप को उनके समक्ष अबोध तथा छोटे शिशु के रुप में पाता था । जैसे एक छोटा शिशु अपनी मां को सर्वस्व समझता है वैसे ही अपनी अम्मा को समझता थ । मैं पूजा और ब्रह्म विद्या सीखने सिखाने की बात भी नहीं करता था । परम पूज्य चाचा जी महाराज को बहुत डरता था, उनसे कभी पूजा रचा सिखाने की प्रार्थना नहीं करता था । जो प्रार्थना उन्होंने बता दी थी वही करता रहता था आन्तरिक उन्नति अवनति की कभी चर्चा न करता था न सुनता था । मेरे मन में यह बात दृढ़ता से घर कर चुकी थी कि परम पूज्यनीय अम्माँ जी स्वयं मूर्ति मान ब्रह्म विद्या हैं, वे मानवी देह धारण कर विविध लीलायें कर रही हैं । लोगों को उनकी ललाम लीलायें देखनी चाहिये वहीं ब्रम्हानन्द तथा परमानन्द की केन्द्र बिन्दु हैं । जो स्वयं गंगा जी में निवास करता है । उसे जल प्राप्त करने हेतु कूप खोदना अथवा उसकी कल्पना करना मूर्खता ही तो है ।

जो अम्मां जी को गुरु माता भाव से देखते थे, चच्चा जी महाराज को गुरु महाराज समझते थे वे ब्रह्म विद्या के विषय में पूछें समझें मैं तो अम्माँ जी महारानी में शक्ति के दर्शन करता मैं.भला क्या पूंछता और क्या जानने की कामना करता मेरे लिये उनके दर्शनों में सब कुछ था।

"श्री अम्माँ जी ईश्वर मूर्तिमान थीं।"

श्री अम्मां जी का भौतिक शरीर जब पञ्चतत्व में विलीन हो गया और वे ब्रह्म शक्ति में लीन हो गई तो कानपुर से परम सन्त महात्मा सद्गुरु शिरोमणि विश्व वन्द्य चच्चा जी महाराज का संवेदना–पत्र श्री मान चच्चा जी के पास आया, वह मुझे देखने को मिला, उस में अम्माँ जी के बारे में लिखा था –"वह बुजुर्ग थी तथा बुजुर्गों में लीन हो गई ।" वह एक सूत्र है जिसकी व्याख्या यों की जा सकती है कि विश्व वन्दनीया मातेश्वरी राधा जब तक मानवी आकृति के माध्यम से ईश्वरी लीलायें करती रही अद्भुत तथ रहस्य मय लीलायें करती रहीं, लोक में आदर्श प्रस्तुत करती रहीं, निश्चिंत अवधि पूरी होने पर अपने दिव्य लोक में जाकर ब्रह्म लीन हो गईं । वे सोचने योग नहीं हैं ।"

जब तक अम्माँ जी मानवी आकार में थीं हम उन से लाभान्वित होते रहे अब वे अपने विराट रुप में मिल गई तो भी अपरिमित लाभ होता है, उस लाभ की प्रतीति तभी होती है जब हम अपने आप को उन से जोड लेते हैं ।

वह परम सत्ता कब कहां से कैसे आई इस का इद्मित्थं ज्ञान किसी को नहीं हुआ फिर भी लाभ अपने पात्रानुसार सभी ले रहे हैं । अंश अंशी को कैसे समझ सकता है । वेद बचन है कि–"को ददर्श प्रथमं जायमानं। एको सद् विप्राः बहुधा वदन्ति।" अर्थात् उत्पत्ति के पूर्व क्या था तथा जो सर्वप्रथम हुआ उसे किसने देखा है एक ही सत था जिसे विद्वान विविध रुपों में वर्णन करते हैं । अम्माँ जी महारानी उसी सत की परम सत्ता में मिल गई हैं । अब वह अपने मानवी आकार से कहीं अधिक लाभ पहुंचाती हैं तथा अपने आश्रितों को सर्वाधिक लाभ पहुंचाती हैं ।

यह समस्त दृश्य विश्व उनकी लीलास्थली है, वह प्रत्येक आकार में अपनी लीला करती रहती हैं ।

श्री अम्मा जी महारानी परमात्म भाव में पूर्णतया मिल गई है, उन्हें लोग अपनी अपनी भावनानुसार पूजते हैं और अपनी अपनी मनोकामनायें सिद्ध करते हैं । श्री अम्मा जी परमात्म भाव में लीन हो कर उसी भाव को प्राप्त हो चुकी है, वे माता भी है पिता भी हैं । भक्त गण स्तुति करते समय कहते हैं –

"त्वमेव माताश्च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धु च सखा त्वमेव।
त्वमेव सर्वं मम देव देव ।।

श्रीमद्भागवत में एक मन्त्र है –

"यं प्रव्रजन्तमनुपेत मपेत कृत्यं–
द्वैपायनो विरह कातर आजूहाव ।
पुत्रेति तन्मयतया तरवोऽभिनेदुः
तं सर्व भूत ह्रदयं मुनिमानतोऽस्मि ।।

शुकदेव जी महाराज की ब्रह्मलीनावस्था ऐसी थी कि वे जनेऊ संस्कार के पूर्व ही जंगल में संन्यास लेकर चले गये । ऐसा कृत्य देख उनके पिता द्वैपायन वेदव्यास पुत्र पुत्र कहकर उनके पीछे दौड़े । शुकदेव प्रत्येक भूत के ह्रदय में निवास करने वाले ब्रह्म के भाव में लीन हो तन्मयता प्राप्त कर चुके थे, अतः उनके स्थान पर तरु पत्रों ने उत्तर दिया । ऐसे प्रत्येक ह्रदय में निवास करने वाले मुनि श्री शुकदेव जी की मैं वन्दना करता हूँ तथा स्मरण दिलाना चाहता हूं कि अम्मां जी महरानी

रचना के अणु अणु कण कण में व्याप्त है तथा अपने भक्तों की मनोकामनायें पूर्ण करती हैं ।

ब्रम्ह लीन स्थिति की अनुभूति के उपरान्त स्वामी रामतीर्थ ने ऐसा ही ज्ञान प्राप्त किया था । वे कहने लगे थे–"मैं राम हूँ तथा मैं ही ऊँ.कार हूं। मेरे ही भय से सूर्य चन्द्रमा प्रकाश देते हैं और वायु अविराम गति से बहता रहता है । (वे कहते थे भीता में पवते वायु, सूर्य चन्द्रौ प्रकाशते ।)

"अम्मां जी महरानी के उपदेश"

मैं अम्मा जी के सान्निध्य में एक लम्बे अर्से तक रहा परन्तु उन्हें कभी उपदेश करते नहीं सुना,, फिर भी मैं अनुभव करता हूँ कि उन्होंने अपने चारु चरित्रों से सारे वेद शास्त्रों का उपदेश कर दिया था ।

एक अवसर पर उन्होंने कहा –

"अजहुँ जासु उर सपनेहु काऊ ।
बसहिं लखण सिय राम बटाऊ ।।
रामधाम पुनि पैहइ सोई ।
कबहुँ जो ऋषि मुनि पावई कोई ।।

भाव यह था कि आज भी श्री चच्चा जी महाराज उनकी भक्ति तथा उनकी महाशक्ति को जो अपने ह्रदय में बसा लेता है वह बिना योग जप तप के परम पद प्राप्त कर लेगा । ह्रदय का अर्थ है मन, बुद्धि, चित्त तथा अहंकार वृत्तियों का समुच्चय स्थान । (ह्रदय में निवास करने वाली जो वृत्ति अपने तथा संसार के होने का भाव पैदा करती है उसे श्री चच्चा जी महाराज में विलीन कर दे, जो अपने होने तथा तत्सम्बन्धी संसार का चिन्तन करती है उस से श्री चच्चा जी महाराज का ही चिन्तन करे, जो

संसार का ज्ञान करती है उससे श्री चच्चा जी महाराज का ही बोध करे, जितने भी संकल्प विकल्प हों, जो भी मनन हो वह सब श्री चच्चा जी महाराज में हो ।)

परम पूज्यनीय अम्मां जी महारानी पूर्णतया श्री चच्चा जी महाराज में विलीन थी उनकी प्रत्येक यति गति श्री चच्चा जी में ही थी । ऐसा कहना अतिश्योक्ति न होगा कि वे अपनी सन्ता महत्ता पूर्ण रुपेण श्री चच्चा जी महाराज में लय कर चुकी थीं । यही वह स्थिति है जिसके विषय में विद्वानों ने कहा है –

"इस जिन्दगी का उसने कुछ भी मजा न जाना ।

मरने से पहले जिसने लुत्फे .कजा न जाना ।"

परम पूज्यनीय अम्मां जी महारानी की जीवन गाथा में वेद, पुराण गीता तथा रामायण आदि सब के दर्शन होते थे । वे ममता की मूर्ति थीं, करुणा, दया, कृपा इत्यादि वृत्तियां उन्हीं में निवास करती थीं दीन भाव से शरणपन्न होकर जो उन के समीप जाता तथा "त्राहि माम्" कहता उसकी वे सारी कामनायें पूर्ण करती थीं तथा अपने पुत्रों के समान ही उस पर कृपा की दृष्टि करती थीं ।

भगवान राम की यह घोषणा कि–"कोटि विप्र बध लागइ जाहू। आये शरण तजौ नहि ताहू ।।" श्री चच्चा जी–महाराज तथा पूजनीया अम्मा जी महारानी के चरित्र में यह पूर्णतया साकार होती थी ।

श्री अम्मा जी के चरित्र की सारी यतियाँ गतियाँ विश्व वन्द्य चच्चा जी महाराज की प्रसन्नता के हेतु थी । एक आख्यायिका के अनुसार एक बार नारद जी ने भगवान श्री कृष्ण से कहा – 'परभो आप राधिका जी

के गुणों का बरवान करते नहीं थकते । आपके अगणित भक्त हैं, अन्यों की वैसी याद नहीं करते । भगवान ने कहा नारद जी बात कुछ ऐसी ही है । कभी तुम भी स्वतः राधिका की प्रशंसा करने लगोगे ।

थोड़ी ही देर में भगवान कहने लगे – "नारद जी मेरे उदर में असह्य पीड़ा हो रही है ।" नारद जी ने कहा पीड़ा शमन का उपाय बताइये ।" भगवान ने गुरव मुद्रा ऐसी प्रदर्शित की तथा इतना कराहने लगे कि नारद क्षुब्ध हो गये तथा उन्होंने कहा प्रभो! शीघ्र कहिये क्या उपचार किया जाय भगवान ने कहा – 'यदि किसी भक्त के चरणों की धूलि मिल जाय, उसे कुछ उदर पर मल दूं तथा कुछ चूर्ण की भांति फांक लूँ तो पीड़ा शान्त हो जायेगी ।" नारद जी तो मन की गति से तीनों लोक में विचरण करते हैं वे तीनों लोकों में भक्तों के पास गये तथा भगवान की वेदना का वर्णन कर उनके चरणों की धूलि मांगी । कोई भी धूलि देने को राजी न हुआ । सबने यही उत्तर दिया' भगवान श्री कृष्ण पर ब्रह्म परमात्मा हैं । उनके मस्तक में यदि हमारे चरणों की धूलि का स्पर्श होगा तो हमें अधो गति की प्राप्ति हो जायेगी । नारद प्रत्येक लोक से निराश लौटे । अन्ततः ब्रज मण्डल में गये राधा रानी के पास जाकर श्री कृष्ण भगवान की पीड़ा की बात कही और उपचार के निमित्त श्री राधा रानी के चरणों की धूलि की याचना की राधिका जी ने यमुना तट से बालुका लाकर चरणें में लपेटा फिर झाड़ कर ढेर सी धूलि दे दी । नारद जी ने अन्य भक्तों की कहानी कही । राधिका जी ने कहा,' मेरा सर्वस्व श्री कृष्ण के लिये है । वे अच्छे हो जायें,. हमें स्वर्ग नर्क जो भी हो हर्ज नहीं है श्री राधा रानी का ऐसा उत्तर सुन नारद जी हत प्रभ हो

गये, वे चरण रज लेकर भगवान के पास गये तथा भगवान को सारा वृतान्त कह सुनाया । भगवान ने कहा –' कहो नारद, अब राधा रानी के विषय में तुम्हारा क्या विचार है । महर्षि नारद ने नारायण नारायण की ध्वनि गुन्जारी और कहा प्रभो! आप की लीला कौन जान सकता है । निश्चय ही श्री राधा के समान अन्य कोई भी आप का अनन्य भक्त नहीं है ।

श्री अम्माँ जी महारानी ने कई अवसरों पर ऐसे आचरणों का परिचय दिया है जिस से उनकी अपने पति देव श्री चच्चा जी महाराज के प्रति अनन्य भक्ति का परिचय मिला है । जब श्री चच्चा जी महाराज सद्‌गुरु की खोज तथा परम तत्व के लाभार्थ भारत के विभिन्न तीर्थों तथा वन्यु प्रदेशों को जा रहे थे तो श्री अम्मा जी महारानी भी उनके साथ जाने को तैयार हो गई । चच्चा जी महाराज ने कहा–'' तुम्हें विछिया समेत सारे आभूषणों का त्याग कर तपस्विनी की भांति बाई जी के समान चलना होगा । श्री अम्मा जी महारानी प्रसन्नता पूर्वक तुरन्त पति की आज्ञापालन को प्रस्तुत हो गई । आध्यात्मिक ऊँचाइयों वाले महात्मा ही उनके त्याग तपस्या को अनुमानते हैं । जाकी रही भावना जैसी प्रभु मूरति देखी तिन तैसी ।''

मैं प्रारब्ध की प्रेरणा से काल चक्र के प्रवाह में पड़ा, सांसारिक भायिक जाल में फंसा शैशव में इस शरीर की जन्म दात्री माता को खो चुका था, वाल्य में पितृ छाया भी खो चुका । मुझे स्वयं को ज्ञात नहीं क्यों तथा किस पूर्व जन्म के प्रभाव से मुझे स्वयं हृदय में. अनुभूति होने लगी कि भगवान राम मेरे पिता तथा भगवती सीता मेरी मां है और ऐसी

धारणा भी दृढ़ हो गई कि एक दिन वे अवश्य मिलेंगे । यह मोह था या प्रारब्ध मैं स्वयं कुछ जानता था । मेरी सहज अनुभूति थी और उसी में रहता था ।

समय बीतता गया मैं भाग्य वश ललितपुर पहुंच गया वहीं विश्व वन्द्य चच्चा जी महाराज के दर्शन हुये । सन् 1935 की जुलाई महीने की पुण्य घड़ी जब परम पूज्य चच्चा जी महाराज के दर्शन हुये । मुझे ऐसा लगा कि यह भगवान राम के अवतार हैं तथैव ऐसा भी विचार दृढ़ता के साथ पैदा हो गया कि अम्मां जी श्री सीता जी की ही अवतारी है । मेरी समग्र चिन्तायें नष्ट हो गई तथा निश्चन्त हो अपने इष्ट देवता तथा भगवीत की छाया में जीवन यापन करता रहा । अपनी भावना को दृढ़ातिदृढ़ बनाने के लिये मैंने नानापुराणों श्रुतियों तथा शास्त्रों का अध्ययन किया तथा सर्वथा मेरे प्रथम भाव को दृढ़ता ही मिली । मैंने जहाँ जिस लोक को देखा मेरी धारणा को दृढ़ता ही मिली ।

मुझमें ऐसी क्षमता नहीं कि मां की लीलाओं का इदमित्थं वर्णन कर सकूं । इच्छा अवश्य प्रबल है कि उनके बारे में और उनके प्रेम प्रवाह को कह सकूं । जितनी शक्ति उन से पा सकूंगा लिखूंगा । पुनश्च –

''अति अगाध जे सरित वर
जौ नृप सेतु कराहि ।
चढ़ि पिपीलिकउ विनहिं श्रम–
तेहि नद पारहि जाहि ।।

तथा

प्रथम मुनिन हरि कीरति गाई ।
त्यहि मग चलब सुगम मोहिभाई ।।

द्वितीय योग'

"मातेश्वरी राधा"

इस सर्ग में जो लिखा जा रहा है, वह श्रद्धालु पाठकों को अद्भुत तथा अतिशयोक्ति न लगे इस दृष्टि से कुछ, तथ्यों को प्रकाश में लाना अनिवार्य प्रतीत होता है । यह श्रद्धा को परिपक्व करने के लिये तथा विश्वास को दृढ़ता प्रदान करने के लिये है ।

इस संसार में जो है मायिक है, इसे स्वप्न दर्शन कहा जाये तो भी समझने समझाने के लिये अप्रत्याशित नहीं हैं ।

कहा गया है – "संसारः स्वप्न तुल्यो हि– राग द्वेष समड.कुलः । स्व काले सत्यवद् भाति प्रबुद्धेऽसत्यवद् भवेत् ।।"

परम सन्त महात्मा तुलसी दास जी ने भी कहा है :– मोह निशा सब सोवन हारा । देखहि स्वप्न अनेक प्रकारा ।। जेहि जाने जग जाइ हेराई । जागे यथा स्वप्न भ्रम जाई ।।

जहाँ भी जिसने सत्य का चिन्तन किया है उसे वही तत्व मिला है । समझने समझाने के लिये उस एक ही सत्य को भिन्न भिन्न प्रकार से भिन्न भिन्न रुपों में तथा भिन्न भिन्न भाषाओं में वर्णन किया है । सत्य तो एक ही है, वह सब का है तथा सब में है "एकोसदविप्राः बहुधावदन्ति" यह दिखाई देने वाला संसार परमात्मा तथा योग माया की रची गई माया की मिलौनी है । इसे सत्य असत्य कुछ भी नहीं कहा जा सकता । यह सत्य भी है, असत्य भी है, सत्यासत्व भी है । जो परमात्मा का दर्शन कर लेता है, परमात्मा स्वरुप हो जाता है सामान्य जन उस की परख नहीं कर सकते बड़े बड़े तत्व वेत्ता भी वास्तविकता नहीं जान सकते अपनी भावना तथा रुचि के अनुसार ही उसे

सब लोग जानते मानते तथा पहिचानते हैं । एक सच्ची घटना का वर्णन कर देना समीचीन समझता हूँ । इस घटना को ज्ञात कर यथा तत्तवतः समझ कर ऐसा विशवास हो गया कि मेरा कथन मात्र कल्पना, मूलक नहीं है । इसमें सत्य का प्रकाश विद्यमान है।

भाई श्री व्रजवासी लाल जी ने अपने द्वारा संपादित पुस्तक "श्री शंकर सन्देशम्" के पृष्ठ (022) पर लिखा है – श्री चच्चा जी महाराज विविध तीर्थों में तत्व की खोज में गये थे, साथ में जगजननी अम्मा जी महारानी भी थीं । श्री चच्चा जी के शब्दों में – "झांसी से चित्रकूट गया । वहां मालूम हुआ कि पं. रामनारायण ब्रम्हचारी बहुत बड़े सन्त हैं । हम दोनों उनके आश्रम की ओर चल पड़े । मैं सत्य की तालाश कर ही रहा था कि इतने में वह स्वयं उछलते हुये हम लोगों के पास आ गये और हम दोनों को साष्टांग प्रणाम कर गदगद हो कहने लगे मरा बड़ा भाग्य है कि आज शक्ति सहित भगवान के दर्शन हुये । उसी पुस्तक के पृष्ठ 30) पर लिखा है – मेरे भाग्य कि राम सीता के दर्शन हुये ।" श्री चच्चा जी महाराज तथा जगजननी में भगवान के दर्शन उनकी साधनावस्था में ही बड़े सन्तों का होते थे । उनके माध्यम से यह निश्चय ही बहुत बड़ा ईश्वरीय चमत्कार था ।

"प्रथम–दर्शन"

लोक में प्रायः सभी लोग भगवान के होने में विश्वास करते हैं । सभी अपनी भावना के अनुरुप भगवान के रुप रंग की कल्पना करते हैं। सभी उनके निवास स्थान के विषय में भी अपनी धारणा बनाते हैं । यह सारी कल्पनायें सब की एक जैसी नहीं होती है । परम सन्त महात्मा तुलसी दास जी ने देवताओं के भ्रम की बात कही है –

"पुर वैकुण्ठ जान कह कोई।
कोउ कह पय–निधि मह वस सोइ ।।
तेहि समाज गिरिजा मैं रहेऊ ।
अवसर पाइ वचन यह कहेऊ।।
प्रभु व्यापक सर्वत्र समाना ।
प्रेम वे प्रगट होहि भगवाना ।।
मोर बचन सब के मन माना ।
साधु साधु कहि ब्रम्हा बखाना ।।

उपर्युक्त तथ्य महात्मा तुलसी दास जी तथा देवताओं की भावना का है । ऐसा सामान्य जन का तो हो नहीं सकता, परन्तु प्रत्येक अपनी भावना के अनुरुप कल्पना करता है । भगवान के विषय में भी कहा जाता है कि वि सर्व रुप मय है ।(ईश्वर सर्व रुप मय अहई।) कृष्णः तु भगवान स्वयम्" । आदि आदि मैं अम्माँ जी महारानी को भगवती सीता जी की अवतार मानता था । जब तक चच्चा जी महाराज ललितपुर में थे, मे चारों ओर एक ऐसा वायुमण्डल निर्मित था कि मुझे ज्ञात ही नहीं होता था कि मैं अम्मा जी से दूर हूं, अथवा वे हम से दूर हैं । यही उनकी इश्वरता अथवा व्यापकता थी । परमपूज्य चच्चाजी के आदेशानुसार मैं पूजा अथवा साधना तो बहुत कम समय तक करता था, सप्ताह में मात्र एक दिन थेडे समय के लिये सत्संग में जाना और प्रार्थना किया करता था। श्री चच्चा जी महाराज का कथन था,"तुम्हारे लिये यह प्रार्थना ही पर्याप्त है तथा यही पूजा है । मैं भी पूर्णतया तृप्त था और यह कह कर आत्मतोष कर लेता कि जो ईश्वर बता दे वही पूजा है, वही ब्रह्म – विद्या की कुन्जी है । मैं तत्व अथवा रहस्य की बात न जानता था न उसके

जानने की इच्छा करता था । मेरे लिये श्री अम्मा जी महारानी ही महालक्ष्मी तथा महासरस्वती थी, वही ऋद्धियों की अधिष्ठात्री सिद्धियों की मूल स्त्रोत तथा ब्रह्म विद्या थी । मैं ज्ञान विज्ञान तथा मोक्ष परम पद आदि कुछ नहीं जानता था न उन में से किसी के प्राप्त करने अथवा जानने की कामना करता था । मेरे लिये अम्मा जी महारानी ही सर्वस्व थी यह सारे विचार मेरे मस्तिष्क में पुन्जीभूत थे और मैं निश्चिन्त घूमा करता था ।

मैं गवर्नमेन्ट हाई स्कूल ललितपुर में विद्या अध्ययन करता था । मैं था तो अनाथ बालक परन्तु बादशाहों जैसी भावनायें धारण करता था सारे ललितपुर नगर में तथा विद्यालय में बड़ा आदर था । यह सब श्री चच्चा जी महाराज का प्रभाव था तथा परम पूजनीया अम्माँ जी महारानी की कृपा तथा दया का प्रताप था, जिसे कोई योगी तपस्वी ही जान पाते थे । मैं तो जगजननी की ममता का कृपा प्रसाद ही समझता था । मेरे रोम रोम से स्वतः एक ही ध्वनि गुन्जारित होती रहती थी," नहि विद्या नहि बाहुवल, नहि खरचन को दाम । ऐसे पतित अनाथ की तुम पत राखो राम।"

जितने सत्संगी थे यद्यपि उनकी संख्या थोडत्री थी परन्तु चरित्र की निराली शान थी । मैं न तो बड़ा यशस्वी सत्संगी था, न बड़ा साध ाक था मन्त्र इत्यादि का जापक था । परम पूज्य चच्चा जी महाराज तथा अम्माँ जी महारानी की शरणागत वत्सलता का प्रभाव था । ऐसा प्रतीत होता था कि जिन भगवान राम तथा जगजननी सीता जी महारानी के पाने की उत्कृष्ट इच्छा लेकर संसार रुपी सघन जंगल में घूम रहा था उनकी प्राप्ति हो चुकी थी । मेरी दृढ़ भावना स्वतः बन चुकी थी कि

भगवान राम तथा भगवती जगजननी सीता केवल प्रेम से ही प्राप्त होते हैं । कहा भी गया ठै – "रीझत राम सनेह निसोते ।"भगवान के चरणों में प्रेम ऐसा हो जिससे कोई छिद्र न हों । यही सबसे बड़ा साधन है यही सिद्धि तथा मुक्ति का द्वार है । अन्य सारे साधन इसी के सहायक तथा इसी की प्राप्ति के हेतु है । जिसे भगवान के चरणें में सच्चा प्रेम प्राप्त हो जाता है, उसे अन्य किसी साधन की आवश्यकता नहीं है । कहा गया है – "मेरे तेरे नाते अनेक मानिये जो भावै। ज्यों त्यों तुलसी कृपालु चरण शरण पावै ।" परम पूज्य चच्चा जी महाराज तथा अम्मा जी महारानी प्रेम के अवतार थे । जिस के कोई नहीं था, उसके वे थे । हमें विभ्रम के कारण ही वे मनुष्य रुप में भासित होते थे, वास्तव में वे आत्मा का साक्षात्कार कर सहज आत्म भाव को प्राप्त हो चुके थे । जहां तक मुझे स्मरण है जनवरी का महीना था, तथा 1937 का वर्ष था । श्री चच्चा जी महाराज का स्थानान्तरण ललितपुर से उरई को हो गया था । राजकीय नियमों के अनुसार स्थानांतरण जनवरी मास में नही करना चाहिये । उन दिनों बच्चे स्कूलों में पढ़ते हैं । अतः शासनादेश द्वारा राजकीय कर्मचारियों के स्थानान्तरण शिक्षण सूत्र में नहीं किया जा सकता परम पूज्य श्री चच्चा जी महाराज के स्थानान्तरण स्थगन निमित्त कोई प्रयास नहीं किया । आदेश को ईश्वर की आज्ञा समझ उस का पालन किया तथा सर्वत्र सब मंगल मय ही हुआ । परम सन्त महात्मा तुलसी दास जी महाराज ने भगवान श्री रामचन्द्र जी के विषय में कहा है –

"प्रसन्नतां या न गताऽभिषेकत स्तथा न ममलौ–
वनवास दुःखतः ।
–मुखाम्बुज श्री रघुनन्दस्य में–

सताऽस्तुसा मंजुल मंगल प्रदा ।।

ऐसी ही स्थिति श्री चच्चा जी महाराज की थी । वे किसी स्थिति में विचलित नहीं हुये ।।

उन दिनों श्री चच्चा जी महाराज के सत्संगियों की संख्या छोटी ही थी परन्तु प्रत्येक सत्संगी में एक अद्भुत शक्ति कीड़ायमान थी । ऐसा प्रतीत होता मानो अवतारों की कलायें ललाम लीलायें कर रही हों । भगवान की भक्ति जो परम प्रेम रुपा तथा अमृत स्वरुपा कही जाती है साकार हो रही थी मेरे मन में यह दृढ़ भावना घर कर गई थी, मानो श्री चच्चा जी महाराज तथा श्री अम्मां जी महारानी के रुप में भगवान राम तथा आद्याशक्ति भगवती सीता जी महारानी का अवतरण हो चुका था । वे ही व्यापक ब्रह्मा थे जो मानवी लीलायें कर रहे थे ।

श्री चच्चा जी महाराज ने सत्संग का भार श्री सीताप्रसाद जी कानूनगो के स्कन्धों पर रख दिया तथा स्वयं उरई को प्रस्थान किया । उन्होंने मुझे भी श्री कानूनगों के कर कमलों में सुपुर्द कर दिया ।

मैंने अभी तक परम पूज्या प्रेम स्वरुपा श्री अम्मा जी महारानी के दर्शन नहीं किया था, परन्तु उनके दर्शनों की उत्कट अभिलाषा थी । मेरी ऐसी भावना थी कि विश्व बन्दनीया अम्मा जी ही महालक्ष्मी श्री सीता जी महारानी है, मैं उनका शिशु हूँ । स्थानान्तरण के उपरान्त जब वे ललितपुर त्याग उरई जा रही थी तो मुझे ऐसा प्रतीत होता था जैसे एक शिशु को उसकी स्नेहमयी मां त्याग कर जा रही हो । सारी इन्द्रियां व्याकुल थीं । मुझे स्वयं को ज्ञात न था और आज भी ज्ञात नहीं कि मैं किस स्थिति में था । श्री चच्चा जी महाराज सपरिवार उरई जा रहे थे, स्टेशन पर प्रथम श्रेणी के प्रतीक्षालय में अम्मा जी महारानी अन्य

महिलाओं सहित ठहरी थी बालकों का भी आवागमन हो रहा था । मेरी दृष्टि में सारा वायु मण्डल विशेष था । पृथ्वी, आकाश, पवन जल तथा अनल आदि पन्च महाभूत तथा अहंकार बुद्दि, मन चित्त आदि वृत्तियां अम्मा जी महारानी के प्रभाव विशेष से प्रभावित थीं । जन्म जन्मान्तर में किये गये पाप तथा तीनों ताप अस्तित्व हीन हो रहे थे । मेरे मन में यह विचार भर गया था कि जगजननी आद्या शक्ति, भगवती सीता जी ही पूजनीया अम्मा के रुप में विराजमान थी । ऋद्धियां सिद्धियां उनकी सेवा कर रही थी । सर्वत्र अमृत रस प्लावन हो रहा था । सूर्य चन्द्रायमान हो रहा था चन्द्रमा निर्बाध गति से अमृत बरसा रहा था, मैं अपनी स्थितियों परिस्थितियों को भूल चुका था, यही महसूस कर रहा था कि पूजनीया अम्मा जी हमारी मां है और मैं शिशु भाव को प्राप्त उनका पुत्र हूँ । मैं लोक के शारीरिक कृत्यों तथा सम्बन्धें को भूल गया । आज ऐसा विचार होता है कि शायद यह निर्विकल्प समाधि की अवस्था हो जो अम्माँ जी महारानी की कृपा से प्राप्त हो गई थी । प्रेम की निर्विकार अवस्था प्राप्त होने पर सारे काम्य कर्म सारी इच्छायें स्वतः छूट जाती है । जब बालक का जन्म होता है तो उसे मां के अतिरिक्त कुछ नहीं सूझता वह मां के अतिरिक्त न किसी जानता है न किसी से कुछ चाहता है । उस नवजात शिशु की भावना का जहां तक विस्तार होता है उसे मां के ही दर्शन होते हैं । ऐसे नवजात शिशु को न पूर्व जन्म के संस्कार वाधित करते हैं न आगे जन्म के अभाव सताते हैं । ऐसी ही मेरी अवस्था बन गई थी । मैं सब कुछ भूल मां को ही देख रहा था । मुझे ज्ञात नहीं कब किस के द्वारा पादाभिवादन कहलाया तथा कब पूजनीया अम्मां जी ने बुला लिया । प्लेटफार्म पर मैं अपनी भावनाओं में खोया टहल रहा था कि श्री

रघुनाथ प्रसाद जी भार्गव के छोटे भाई भगवती प्रसाद ने कहा "तुम्हें प्रतीक्षालय कक्ष में माताजी बुला रही हैं ।" मैं जिन विचारों, भावनाओं में खोया प्लेटफार्म पर टहल रहा था सब भूल गया तथा प्रतीक्षालय कक्ष को चल पड़ा वहां जाते ही सब कुछ भूल गया, अम्माँ जी ने भी वैसे ही गोद में उठा लिया जैसे जननी नवजात शिशु को उठा लेती है एक क्षण के लिये तो मैं अपने होने का भाव ही भूल गया । आंखें खोला तो जगजननी के दर्शन हुये । सारा प्रतीक्षालय कक्ष सच्चिदानन्दी ज्योति से भरा था, चन्द्रमा अमृत की वृष्टि कर रहा था । नया जीवन था, नया लोक था मैं समझ नहीं पाया क्या था तथा कैसी अवस्था थी । अम्माँ जी को देख वैसे ही फूट फूट कर रो रहा था जैसे कोई जन्मों से वियुक्त बालक अपनी मा को पाकर फूट फूट कर रो रहा हो ।

एक उर्दू भाषा का शेर है – "गुनाहों की नदागत के, जो दो आंसू निकलते हैं । तलातुम आ ही जाता है, खुदा की बहरे रहमत में ।" (जब कोई पाप अपने पाये कर्मों से शर्मिन्दा हो कर ईश्वर के सामने दो आंसू पश्चाताप के बहाता है तो ईश्वर के कृपा एवं दया के समुद्र में तूफान उठने लगता है ।) मेरे कितने जन्मों के संचित पाप उदय थे न उनकी गणना की जा सकती है न उनका लेखा लिया जा सकता है । अम्मा जी के समक्ष जाकर उनके समक्ष फूट फूट कर रोने से सारे विकार जो संचित पाप कर्मों से प्रादुर्भूत थे वे बह गये । यह कोई अतिशयोक्ति अथवा कल्पना जन्य तथ्य नहीं । पुराणों में उपलब्ध विविध आख्यानों से स्पष्ट है कि भगवान, विष्णु तथा महालक्ष्मी के दर्शन होते ही सारे पाप नष्ट हो जाते हैं । परम सन्त महात्मा गोस्वामी तुलसीदास जी ने अपनी रामायण में भगवान राम से घोषणा करायी है –

मम दर्शन फल परम अनूपा ।

जीव पाव निज सहज स्वरुपा ।।

वही कल्प तरु की छाया थी, तथा वही कामधेनु का प्रसाद था वही जगजननी का दर्शन था तथा आद्याशक्ति में निवास करने वाली वही ममता की सघन छाया थी।

तृतीय योग'

"मातेश्वरी राधा"

अम्माँ जी का वह दर्शन अद्‌भुत था । जन्म जन्मान्तरों के संचित पापों की भीषण ज्वाला में मेरा अंग अंग जल रहा था, माँ के दर्शनों में अकथनीय शान्ति का उदय तथा आभास हो रहा था' लौकिक दृष्टियों ने परव्रह्म परमेश्वर की जिन विभूतियों को विविध खण्डों में विभक्त कर रखा है वह सब एक व्यापक पावन प्रकाश में विलीन हो रही थीं, जैसे व्यापक आकाश सूर्य चन्द्रमा तारागणों इत्यादि ज्योति स्फुलिगों को अवकाश प्रदान कर रहा था, ठीक वैसे ही अम्माँ जी के उस दर्शन के प्रभाव प्रवाह में सत्य का जो ऋत् स्वरूप है उद्‌भासित तिरोहित हो रहा था' लोक–दृष्टि जिसे प्राप्त करने हेतु विविध प्रयत्न तथा तप साधना करने पर भी कृत–कार्य नहीं हो पाती । वह स्त्री को पतिव्रत प्रसाद से तथा पुत्र अथवा शिष्य समुदाय को माता–पिता एवं गुरु के प्रसाद एवं प्रताप से सहज ही सुलभ हो जाता है । वही दिव्य प्रसाद मुझे तत्काल सुलभ हो रहा था । मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा था कि एक अलौकिक दिव्य दैवी शक्ति है जो अम्माँ जी के रुप में प्रादुर्भाव थी अम्माँ जी की विशेष कृपा दृष्टि उनके विशेष कृपा प्रसाद से सुलभ हो रही थी । भगवान श्री कृष्ण जी महाराज ने अर्जुन को अपने विराट रूप का दर्शन कराया अर्जुन ने भयाकुल हो कहा –

"अदृष्ट पूर्वं हृषितोऽस्मि दृष्ट्वा

भयेन च प्रव्यथितं मनो मे ।

तदेव मे दर्शय देव रूपं

प्रसीद देवेश जगन्निवास ।।11/45

अर्जुन ने कहा – "प्रभो आप ने मुझे अपने जिस स्वरुप का दर्शन कराया है वैसा रूप मैंने कभी कहीं नहीं देखा । मेरे मन में अपार हर्ष है तथा वह भयाकुल भी है । इसलिये मुझे धैर्य प्रदान करने के लिये आप कृपा कर अपने पूर्व रूप का ही दर्शन कराइये । मेरे ऊपर कृपा कीजिये तथा प्रसन्न हों ।"

भगवान, में वह सब कुछ है जो मानव बुद्धि के परे है । जिसे जब जहाँ जिस रूप की आवश्यकता होती है, दिखाते हैं जिसे जो चाह होती है प्रदान करते हैं । श्री रामचरित मानस में एक स्थल पर परम सन्त महात्मा तुलसी दास जी महाराज ने एक भक्त के मुखरविन्द से कहलाया है –

"जो नहिं देखा नहि सुना जो मनहूँ न समान

सो सब वहाँ विलोकेंउ, राम न देखेंउ आन"

ऐसी ही अवस्था हमारी थी, तत्काल समस्त – प्रतीक्षालय कक्ष में जो वातावरण था वैसा वातावरण न हमने कभी कहीं देखा था न सुना था न पढ़ा केवल अनुमान था कि जहाँ भगवान होंगे तथा जहाँ आद्या–शक्ति जगजननी होंगी वहाँ सब कुछ अद्भुत होगा, वहाँ चिन्तामुक्त वायु–मण्डल होगा, माँ के प्रभाव से वहाँ सब कुछ अद्भुत था । हमारी सारी आशायें फलीभूत हो रही थीं । शैशव से हम ने लौकिक व्यथायें तथा अभाव ही अभाव देखा था । माँ के प्रभाव प्रताप से सारे अभाव नष्ट हो चुके थे तथा पीड़ायें शान्त थी ।

मैंने जैसा वायुमण्डल तथा जैसे वातावरण का अनुभव वहाँ किया उस से ज्ञात हो रहा था कि न कहीं संसार है न संसार की पीड़ायें । वह ऐसी विभूतियों से भरा वातावरण था जिनका अस्तित्व इस दृश्य विश्व में

कहीं था ही नहीं । जो कुछ मुझे प्राप्त हो रहा था वह क्यों तथा कैसे था इसका सही उत्तर तो देना मेरे लिये सम्भव नहीं है, न तो मैंने योग साधना की थी न योग की प्रकियाओं जप, तप आदि का ही कभी अभ्यास किया था । मेरा विचार है कि सारे योग जप, तप आदि साधन मात्र श्रम हैं जो कुछ दूर तो ले जा सकते हैं कुछ आध्यात्मिक विभूतियाँ दिला सकते हैं परन्तु परमेश्वर का वास्तविक वैभव तो मात्र उनकी अहैतुकी कृपा दृष्टि से ही प्राप्त होता है । उसी वैभव की एक झलक मुझे उस क्षण प्राप्त हो रही थी उसी के विषय में भगवान श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है:–

"न वेदयज्ञाध्ययनैर्न दानै

न च कियाभिर्न तपोभिरुग्रैः ।

एवं रूपः शक्य अहं नृ लोके

दृष्टुं त्वदन्येने कुरुप्रवीर ।।11/48।।

माँ की कृपादृष्टि मुझे उस समय क्यो तथा कैसे प्राप्त हुई यह रहस्य मैं स्वयं नहीं जानता न आज तक जान सका । मैं इतना ही कह सकता हूँ कि यह परमात्मा की अहैतु की कृपा का प्रसाद मात्र जो कभी कभी किसी को प्राप्त होता है ।

मैं महसूस करता हूँ कि जब किसी की अन्तरात्मा अत्यन्त दीन तथा आश्रय विहीन होकर परमात्मा को पुकारती है तो परमात्मा उसे ऐसी कृपा तथा दया की धार से आप्लावित कर देते हैं । मैं आश्रय विहीन माँ की ममता पाने के व्याकुल भटक रहा था, परमात्मा नाथा ने दयालु हो कर मुझे माँ की ममता की धार से आप्लावित कर दिया । यह दीनानाथ की अहैतुकी कृपा–विभूति ही थी ।

मैं कब से माँ की ममता प्राप्त करने को व्याकुल था, यह तथ्य मुझे स्वयं को ज्ञात न था, मुझे केवल इतना ही प्रतीत हो रहा था कि मुझे सर्वस्व मिल गया। लोक में प्रायः लोग अपने छोटे मोटे कार्यों की सिद्धि के लिये परमात्मा का भजन करते हैं। कुछ लोग सत्य की खोज में निकले उन्हों जो जितना प्राप्त हो सका उसी को अन्तिम सत्य मान कर उस के प्रचार प्रसार में लग गये, एक बड़ा समुदाय उनके पीछे चला। ऐसे तपस्वी, साधक स्वयं कहाँ है इस का ज्ञान उन्हें नहीं है फिर भी अपने पीछे भीड़ लेकर चलने की धुन में मत मतान्तर तैयार करते तथा अपने अहं की तुष्टि करते रहते हैं, मैं तो भगवान को खोज रहा था उनकी महाशक्ति जगदम्बा की खोज में था, वह मुझे प्राप्त हो रहा था।

श्री अम्माँ जी महारानी ईश्वर की महाशक्ति थीं, वे ईश्वर में लय थीं, उनको जो जिस रूप में खोजता उसे उसी रूप में प्राप्त हो सकती थीं। वे ईश्वर की ललाम लीला में सहयोग प्रदान कर रही थी। हमारे लिये वे ईश्वर की मूर्तिमान ममता थीं। मैं माँ को अपने शैशव काल में खो चुका था। ईश्वर स्वयं ममता का प्रसार करने को अम्माँ जी के रूप में प्राप्त हो चुका था।

अम्माँ जी के उस प्रथम दर्शन में ही मुझे सब कुछ प्राप्त हो चुका था। मेरे सारे अभाव नष्ट हो चुके थे, जो प्राप्तव्य था प्राप्त हो चुका था। श्री चच्चा जी महाराज सत्संगियों तथा भक्तों के साथ प्लैट फार्म पर टहल रहे थे, अम्माँ जी ने उन्हें बुलवाया वे प्रतीक्षालय कक्ष में आये, एक कुर्सी पर बैठ गये, मैं भूमि पर बैठा उनके चरण कमलों को पकड़े था। उस समय उन्हों ने क्या उपदेश दिया मुझे कुछ याद नहीं, केवल इतना याद है कि उन्होंने कहा – चिन्ता मुक्त हो कर पढो लिखो तथा संसार के

कार्य करो। अपने आप को अकेला न महसूस करो। मैं कहीं जा नहीं रहा हूँ, सदा सर्वदा सर्वकाल तुम्हारे पास रहूँगा तथा तुम्हारी देखभाल करता रहूँगा, जब चाहो उरई आ जाना यदि आवश्यकता होगी तो मैं तुम्हें रुपया भी भेज दूँगा।

इतने में जिस गाड़ी की प्रतीक्षा थी आ गई। श्री चच्चा जी महाराज ने मुझे महात्मा सीता प्रसाद जी कानूनगो के सुपुर्द किया तथा सब लोग बाहर आ गये। श्री सीताप्रसाद जी की – सिपुर्दगी में भी मुझे प्रतीक्षालय कक्ष प्लेटफार्म पर ही दिया था।

रेलगाड़ी ललितपुर से उरई के लिये छूट गई। मैं श्री चच्चा जी महाराज में भगवान राम के तथा अम्माँ जी महारानी में जगजननी सीता जी की भावना करता था। भगवान तथा भगवार्ता सीता जी के बारे में जैसी हमारी भावनायें तथा कल्पनाएँ थीं वैसा ही दर्शन श्री चच्चा जी महाराज तथा अम्माँ जी महारानी के करता था। मेरे लिये तो सब सहज तथा महाशक्ति अम्माँ जी का प्रभाव मात्र था। बड़े–बड़े ऋषियों महर्षियों तथा चिन्तकों ने भी ऐसा ही अनुभव किया था।

वैदिक ऋषियों का कथन है – "उस अनादि सत्ता का दर्शन किसने किया है अर्थत् किसी ने नहीं किया है। सृष्टि रचना तथा सांसारिक हलचल के पूर्व तो एकमात्र वही सत्ता थी। किसी ने नहीं देखा कि पहिले किसका जन्म हुआ "को ददर्श प्रथमं जायमानम्" विद्वान तथा साधक तो प्रथम आवर्भूत एक सत्ता का विविध रूपों में वर्णन करते है। ("एको सद् विप्राः बहुधा वदन्ति") जितना ज्ञान पुस्तकों के पढ़ने से जन्मू जन्मान्तर से भगवत्कृपा से होता है वह सारा ज्ञान विज्ञान माँ की कृपा से तत्क्षण मुझे स्वतः हो रहा था। वहीं इस तथ्य का भी ज्ञान हो

रहा था कि परमात्मा तथा उनकी अनन्य शक्ति माँ का ज्ञान कैसे होता है । परमात्मा का ज्ञान ही उनकी प्राप्ति होना है ।

मेरे मन में स्वतः विश्वास दृढ़ हो रहा था कि अम्माँ जी ईश्वरी शक्ति हैं और वे निश्चय ही मेरी माँ हैं । ऐसे विश्वास तथा दृढ़ निश्चय का होना एक महान सिद्धान्त का द्योतक था वह यह कि जो सर्वथा तथा सर्वतः परिपूर्ण है उसका दर्शन कहीं किसी पदार्थ में होना आश्चर्य की बात नहीं है ।

गीता शास्त्र के एकादशम् अध्याय के – वर्णन अनुसार भगवान श्री कृष्ण में अर्जुन ने सारे ब्रहमाण्ड का दर्शन किया था, उसने उन घटनाओं का जो भविष्य में घटित होने वाली थीं साक्षात्कार किया था तथा वह भयग्रस्त हो गया था । भगवान में वह सब कुछ है जो मानव बुद्धि के परे है । मैंने जिस स्वरुप का दर्शन किया वह ममता का साकार रूप था ममता भगवान की वह मूर्ति है जिसे प्राप्त कर माँ अपने शिशु को ह्रदय का सम्पूर्ण द्रवत्व उडेल देती है ।

मैंने अम्माँ जी महारानी के जिस स्वरुप का दर्शन किया वह परमेश्वर का अलौकिक रूप था तथा उस के माध्यम से ईश्वर मुझे माँ की प्राप्ति करा रहा था । मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा था कि अम्माँ ही मेरी असली माँ है वही सती सीता, सावित्री हैं वही – महालक्ष्मी हैं और चच्चा परब्रह्म परमेश्वर के स्वरुप राम, कृष्ण आदि स्वरूपों के वर्तमान स्वरूप हैं । श्री अम्माँ जी महारानी तथा परमात्मा स्वरूप चच्चा जी महाराज पर ब्रह्म स्वरूप ही हैं उनकी व्यापकता निखिल ब्रह्माण्ड में हैं । वे दोनों सब को अपन ाही अंग जानते मानते हैं । अज्ञान अन्धकार द्वारा एक ब्रह्म में अनन्त ब्रह्माण्डों की सत्ता बना ली गई है । यही अज्ञान माया शब्द द्वारा

बोध करा जाता है । माया को वास्तविक अर्थ है जो है नहीं परन्तु होने का भ्रम पैदा करता है ।

मुझे अम्माँ जी ने अपने जिस रुप का बोध कराया वह सहज ही ब्राह्मी शक्ति ही थी जीव में अज्ञान के कारण ईश्वर से अलगाव प्रतिभासित होता है परमात्मा पूर्ण सक्षम है वह जब चाहे किसी के मैहावरण को हटा कर अपने स्वरूप का दर्शन करा सकता है ? जिस को जैसी शक्ति देना उचित समझता है, देता है । किसको क्या और कितना देना उचित है इस तथ्य को ईश्वर ही बेहतर समझता है जीव नहीं । कहा गया है – "सब मम प्रिय सब मम उपजाये ।" यह भी कहा गया ळै – "सब कर परम प्रकाशक जोई । राम अनादि अवध पति सोई ।।"

मुझे माँ की ममता की तलाश थी । अम्माँ जी दर्शन प्राप्त कर दीनता का भाव भी पूर्ण रूपेण जागृत हो गया था । अतः मुझे यह स्वतः बोध हो गया कि यही मेरी माँ है, यही सीता सती सावित्री, गीता गंगा, गायत्री, महालक्ष्मी, सरस्वती तथा आद्या शक्ति शिवानी या पार्वती है ।

जब भी जीव में ऐसे भाव उदय होते हैं तुरन्त ही मोह ग्रन्थियाँ टूट जाती हैं और परमात्मा से सम्बन्ध जुड़ जाता है । सन्तों में यह तथ्य सर्वत्र प्रचलित है कि –

"सौ सौ मुकाम होते हैं तय इक निगाह में ।।

पुनश्च परमात्मा में तो सारी आश्चर्य विभूतियाँ विद्यमान हैं मुझ जैसे दीन हीन अनाथ को यदि उन्होंने माँ की ममता प्रदान कर दी तो कोई आश्चर्य नहीं है । परमपिता परमात्मा अवतार ले कर सभी आश्चर्यमय लीलायें करते हैं । भगवान ने स्वयं गीता में कहा है :–

"पिताहमस्य जगतो, माता धााता पितामहः ।

वेद्यं पवित्रमोंकार ऋक्साम यजुरेव च ।।

मुझे अम्माँ जी में आद्याशक्ति तथा जगजननी के दर्शन होना अप्रत्याशित बात नहीं । माँ ने दर्शन दे कर मुझ अनाथ को सनाथ कर दिया । यह उनका ईश्वरत्व है ।।

चतुर्थ योग

"मातेश्वरी राधा"

तृतीय योग में वर्णन है कि मुझे श्री अम्माँ जी महारानी का प्रथम दर्शन उस समय प्राप्त हुआ जब परम पूज्य चच्चा जी महाराज का स्थानन्तरण ललितपुर से उरई हो गया था। सर्व सामान्य की ज़ानकारी हेतु यह तथ्य लिख देना आवश्यक तथा समीचीन है कि चच्चा जी महाराज गृहस्थाश्रम में रहकर पूर्ण ब्रह्म की पदवी प्राप्त कर चुके थें। उनको ईश्वरीय तत्व का विज्ञान फतेंहगढ़ निवासी परम सन्त महाराज श्री रामचन्द्र जी महाराज से प्राप्त हुआ था। चच्चा जी महाराज को ब्रह्म विद्या अत्यन्त अल्पकाल में प्राप्त हो गई थी। श्री चच्चा जी महाराज के आध्यात्मिक शिक्षा प्राप्त करने के विषय में परम सन्त महात्मा तुलसीदास जी की वह उक्ति पूर्ण रूपेण लागू होती है जो उन्हों ने भगवान श्री रामचन्द्र जी महाराज के विषय में कही थी अर्थात् "गुरूग्रह पढ़न गये रघुराई"।

अल्प काल विद्या सब पाई।। श्री चच्चा जी महाराज के विषय में अलग से पुस्तक लिखने का विचार है, उस समय सारे विशिष्ट दृश्य किये जायेंगे।

हमारी अम्माँ जी महारानी चच्चा जी की द्वितीय पत्नी थी। प्रथम पत्नी के देहान्त के उपरान्त श्री चच्चा जी महाराज ने दूसरा विवाह कुटुम्बि जनों तथा बुजुर्गों के आग्रह पर ही किया था। जैसे भगवान राम ने भगवान शकंर को वचन बद्ध करके जगदम्बा पार्वती जी से उनका विवाह करवाया था ठीक वैसे ही चच्चा जी महाराज का वचन बद्ध कर

उनके गुरूजनों ने उनका विवाह करवाया था। उनका यह दूसरा विवाह भगवान तथा पार्वती जी के विवाह के तुल्य ही था।

ललितपुर स्टेशन से जब गाड़ी उरई के लिये छूट गई तथा परम पूज्य चच्चा जी महाराज अपने परिजनों सहित उरई चले गये। तो जो लोग उन्हें विदा करने स्टेशन गये थें लौटकर अपने अपने घरों को गये। मैं उन दिनों गवर्नमेन्ट हाईस्कूल ललितपुर मे कक्षा आठ में पढ़ता था। मैं भी अपने वासु गृह को गया। मुझे ऐसा लगा जैसे शरीर से निकल कर प्राण ही चले गयें हों। कुछ क्षणों पश्चात ऐसा प्रतीत होता जैसे मैं बहुत बड़ी प्रकाश क्षत्र–छाया में हूँ। वह प्रकाश मानो अम्माँ जी महारानी तथा परम पुज्य चच्चा जी महाराज से प्रादुर्भत हो रहा हो। वह वियोग जन्य सारे तापों को शान्त कर रहा था। कभी संयोग कभी वियोंग दोनों की लहरें थपेड ले तथा दे जीवन को धन्य बना रही थीं। मेरे मन प्राण चित्त आदि सभी उनकी परमेश्वरी सत्ता में विलीन रहे थे मैं अपना आपा खो चुका था।

मैं ऐसा अनुभव करता था कि अम्माँ जी महारानी निरन्तर हमारे साथ हैं और अपनी गुप्त तथा दैवी शक्तियों से हमारी रक्षा कर रही है। दीर्घ काल से व्याप्त माँ की ममता का अभाव नष्ट हो चुका था और मुझे अनुभव होता कि मैं कल्प तरू की क्षत्र–छाया में सर्वतः और सर्वथा रक्षित है। मुझे किसी भी लौकिक निधि की कामना नहीं होती थी। ईश्वर की प्राप्ति के बाद जिस सुख शान्ति तथा आनन्द के उपलब्धि की कामना मनुष्य की होती है मुझे वह सब प्राप्त हो रहा था। ऐसा सुख ऐसा आनन्द जो, कभी किसी को प्राप्त नहीं होता वह सब मुझे प्राप्त हो रहा था। बहुघा देखा जाता है लोग ईश्वर से क्षणिक सुख तथा आनन्द देने वाली

लौकिक वस्तुयें चाहते हैं यह अज्ञान तथा मोह के प्राबल्य की अवस्था है यों भी कह सकते हैं मृग–मरीचिका है जो प्राप्त होने पर भी अप्राप्त ही रहती है। जो अभी प्राप्त हुई अभी क्षण भर को तृप्ति प्रदान कर पुनः तृप्ति की अवस्था से दर हट जाती है। पुनः मन में अतृप्ति की ज्वाला जलने लगती है तथा साधक पुनः इधर उधर भटकने लगता है। फिर नये साध नों की तलाश में डूब जाता है। यही संसार चक्र है। अम्माँ जी महारानी की कृपा दृष्टि ने मुझे सब से दूर हटा लिया। मुझे अम्माँ जी तथा चच्चा जी के अतिरिक्त कुछ सूझता बूझता नहीं था। मुझें ऐसा प्रतीत होता कि मैं एक छोटा शिशु हूँ जो परमात्मा स्वरूप चच्चा जी तथा विश्व वन्द्या अम्माँ जी को गोद मं सहजानन्द की अनुभूति करता खेल रहा हूँ। सारा भूत भविष्य वर्तमान चच्चा जी महाराज तथा अम्माँ जी महारानी की भृकूटि–विलास में संसार का चक्र जाने कब से चल रहा है कब से चल रहा है कब तक चलेगा इसका अनुमान लगाना भी सम्भव नहीं है फिर वर्णन करने की क्षमता किस में सम्भव हैं।

परम पूज्य चच्चा जी का तथा जगदम्बा अम्माँ जी महारानी के जिस स्वरूप का दर्शन होता है वह लोक–दृष्टि का परिणाम मान्य है। वास्तविक स्वरूप का दर्शन तो उनकी कृपा तथा दया से ही होता है। श्री कृष्ण भगवान ने अर्जुन से कहा था :–

न तु मां शक्यसे दृष्टु गनेनैव स्व चक्षुणा।
दिव्यं ददामि ते चक्षुः पश्य में रूपमैश्वरम् ।।"

यह दृश्य विश्व परमेश्वर के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। ऐसा सत्य सामने है परन्तु ज्ञात कुछ और ही होता है। रचना का प्रत्येक अंग यही समझता है कि भगवान हम से बहुत दूर हैं वह परम समर्थ हैं सब कुछ

कर सकते हैं फिर भी हमारी पुकार नहीं सुनते हमारा दुख नहीं दूर करते। ऐसे सोच विचार का नाम ही माया है। माया का शाब्दिक तथा निरुक्तात्मक अर्थ है जो है नहीं परन्तु होने का भाव प्रदर्शित करती है और दुख सुख देती रहती है। परम पूज्य चच्चा जी महाराज कभी–कभी कहा करते थे।

"जो कुछ है सो है नहीं

जो नाही सो हैं।

है नहीं के बीच मे

जो कुछ है सो है।।"

इस भाव को समझने वाले कुछ कम ही होते है। सन्त महात्मा कवि कोबिद यही समझाते रहते है। इसी को समझाने के लिये शास्त्र पुराण लिखे गये है इसी को समझोने के लिये शास्त्र पुराण लिखे गये हैं इसी का मन्त्र रूप से जाप करने से आत्म सिद्धि प्राप्त होती है। आत्म सिद्धि का अर्थ है अज्ञान मुक्ति तथा सर्व शक्ति सम्पन्ना श्री गुरू देव की कृपा शक्ति तथा सत्यामृत सम्पन्ना आत्मा का दर्शन।

श्री अम्माँ जी के जिस मानवी रूप का दर्शन होता है उनका वह मानवी रूप है परन्तु कल्मष मुक्त कोटि तीर्थ समान पवित्र स्वरूप है। वे भगवत् स्वरूप चच्चा जी महाराज के ध्यान में निरन्तर मग्न रहती हैं। सामान्य जन उन्हें भले ही मानवी समझें परन्तु वे चच्चा जी महाराज में निरन्तर निवास करने वाली उन्हीं की महाशक्ति हैं। अम्माँ जी के उसी रूप को जो चच्चा जी महाराज में निरन्तर लीन रहता है योग–माया, प्रकृति, जगदम्बा अव्याहत शक्ति आदि करके जाना जाता है वे विराट स्वरूप परमात्मा नर–वेश धारी परम पूज्य चच्चा जी महाराज में निरन्तर

निवास करने के कारण महामन्त्र रूपा है उनका जो जिस भाव से सेवन करना है उसको उसी भाव से फल मिलता हैं। मैंने माँ के रूप में उनका सेवन किया वे मुझे माँ के रूप में प्राप्त हुई ममता के धार निरन्तर मेरे ऊपर उँडेलती रहती हैं, इस भाव में लीन होने के कारण मैं उन्हें जग ननी आद्याशक्ति भगवती सीता के रूप में पाता हूँ। वे ही राधा, रूकमणी, लक्ष्मी, पार्वती बन जाती है तथा मुझे माँ का अखण्ड ममता से आप्लावित करती हैं।

श्री अम्मा जी जैसी दया करुणा ममता मुझे प्रदान करती थीं, वैसी ही अपने सभी भक्तों को करती थी। वे अद्भुत तथा विचित्र थीं। वे भगवान की मुर्तिमान करुणा थीं, दया थीं प्रेमावृत्ति थीं। वे जहाँ निवास करतीं वह स्थल स्वर्ग तथा अपवर्ग से अधिक महिमा मण्डित तथा शोभा सम्पन्न हो जाता था। स्वर्ग तथा अपवर्ग की शोभा का छवि–क्षटा घटा का वर्णन किया भी जा सकता है परन्तु जगज्ननी अम्माँ जी जहाँ निवास करती उसका वर्णन हम अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिये करते है परन्तु उसका वास्तविक वर्णन किसी भी अल्पज्ञ के लिये अत्यन्त दुरुह है। बड़े–बड़े शास्त्रज्ञों ने भी उनकी महिमा का इदमित्थं वर्णन करने का साहस नहीं किया हैं।

परम सन्त महात्मा गोस्वामी तुलसी दास जी महाराज का कथन है कि रामायण तो नाना पुराण निगम आगम की सम्मति का निरूपण मात्र है। थोड़ा अंश मेरा अनुभव है तथा अन्य स्थलों से प्राप्त आशीर्वाद है।

"नाना पुराण निगमागम सम्मंत यदरामायणे निगदिंत क्रचिदन्यतोऽपिं।

स्वान्तः सुखाय तुलसी रघुनाथ गाथां–भाषा–निबद्ध मति मंजुल मातुनोऽपि।।

जब तुलसी दास जी महाराज अपने इष्ट–देव भगवान राम की महिमा का वास्तविक वर्णन नहीं कर सकते तो मैं अपनी गुरू माता का इदमित्थं वर्णन कैसे कर सकता हूँ। यदि किसी विद्वान का इसमें कोई त्रुटि अथवा अतिशयोक्त ज्ञात हो तो उसकी बुद्धि के लिये उचित तथा समीचीन है, परन्तु मेरे लिये सर्वथा सत्य ही है। एक सद्यः जात शिशु अपनी जननी का जैसा समझता है वैसा ही मैं अपनी अम्माँ जी के स्वरूप में माँ की ममता मिली है तो मेरे लिये तो वही सर्वस्वरूपा तथा सर्वस्व हैं। मेरी दृष्टि में माँ से बड़ा कोई नहीं है। शिशु की दृष्टि में माँ से बड़ा कोई नहीं होता भगवान माता हैं उसी न्याय से माता भगवान ह। जैसे भगवान अपनी शरण में आये शरणागत के पाप पुण्य नहीं दखते वैसे ही मा. भी गर्भगत भ्रूण के अपराधों को क्षमा करती तथा भ्रणू जब गर्भ में हाथ पैर चलाता है तो क्या माता उसके पाद–क्षेप का अपराध मान उस पर क्रोध करती है, नहीं उस पर दया करती है और अवधारणा करती है कि यह भी हमारी शक्ति का ही तो प्रदर्शन है। जैसे यह सारी रचना भगवान के गर्भ में है, अपने सारे कृत्यों से भगवान में क्षोम पैदा करती है परन्तु भगवान उसे न तो दोष मनाते हैं न उससे रुष्ट होते हैं वे उसे अपनी ही लीला समझते हैं। ऐसे ही हमारी अम्माँ अमृत वितरण करती रहती हैं, वे शिशुओं कें अपराधों की ओर नही देखती हैं उन्हे अपनी कृपा तथा दया का प्रसाद रूपी अमृत पिलाती हैं।

कुछ लोग अज्ञान से आवृतित, अंहकार से प्रेरित होकर सृष्टि रचना का विचार करतें है। चौबीस तत्त्व की कल्पना कर रचना की उसी का विकार मानते हैं। रचनाकार की रचना के रहस्य को जानने वाले को रचनाकार से बड़ा ज्ञानी विज्ञानी होना चाहिये। यह भी एक अज्ञान की

रहस्यमयी कल्पना है। कोई भक्त अपने को भगवान से बड़ा नही मानता न वह सृष्टि रचना की मीमांसा तथा व्याख्या करता है वह तो सब भगवान की लीला जानता मानता है। भगवान का रहस्य तो भगवान ही जानते है कोई अन्य नहीं जानता तत्त्व तो भगवान का रहस्य है उनकी दृष्टि से स्रवित अमृत है उसे कौन जान सकता है, उसे भगवान ही जानते हैं। इसी प्रकार माँ की ममता का रहस्य भ्रूण कैसे जान सकता है, वह तो स्वयं माँ की कृपा–दया का परिणाम है।

मैंने अपनी अम्माँ में कभी रोष अथवा क्रोध देखा ही नहीं। मैं कितना अपराध करता इसकी गणना सम्भव नहीं। परन्तु अम्माँ की दया कृपा के समुद्र की सीमा का आकलन भी सम्भव नहीं हैं। उनकी कृपा दृष्टि हमारे सारे पापों तथा दोषो को सोख लेती तथा ऐसा करने से जो गड्ढा तैयार होता उसे अपनी दया–दृष्टि से च्युत होने वाले अमृत से भर देतीं। ऐसी ममता किसी अन्य में न देखी गई है न सुनी गई है।

"सकल समुद्र को मसि करइ–लेखानी सब वन राइ।
लिखइ शारदा जनम भीर– हरि गुण लिखा न जाइ।।"

ऐसी ही अवस्था माँ की ममता की है उसका लिखना सम्भव नही है।

पंचम योग'

"मातेश्वरी राधा"

"श्री अम्माँ जी में विम्बित दर्शन"

दर्शन का अर्थ देखना या दिखना होता है मौखिक उपदेश में न धर्म रहता है न दर्शन। श्री अम्माँ जी महारानी इसी सिद्धान्त का पोषण करती थीं, वे अपने आचरण द्वारा ही धर्म तथा दर्शन शास्त्र का उपदेश करती थी। वे जहाँ निवास करतीं वहीं धर्म प्रगट रूप में निवास करता था, तथा वही पर ब्रह्म परमात्मा प्रगट होकर स्वर्ग तथा–अपवर्ग की छटा–घटायें दिखाते थे। वहाँ सच्चिदानन्द की धार प्रवहमान रहती थी श्री कृष्ण भगवान के लिये श्री मद्भागवत में कहा गया है–

" सच्चिदानन्द रूपाय विश्वोत्पत्यादि हेतवे–तापभय विनाशाय श्री कृष्णाय वयं नमः।।

यही सिद्धान्त श्री अम्माँ जी महारानी में लागू होता था। उनके समीप बैठने, उनका स्मरण करने अथवा उनकी दया–दृष्टि प्राप्त करने से सच्चिदानन्द स्वयं प्राप्त हो जाता था। ऐसा लगता था चारों दिशायें सच्चिदानन्द का सागर उँडेल रही हैं। दैहिक दैविक भौतिक तीनों तापों से भरी संसृति गायब हो गई तथा अद्भुत आनन्द एंव प्रकाश की सृष्टि व्याप्त हो गई है। सृष्टि–लीला संचालन हेतु भले ही जगदबन्ध जगदीश्वर श्री चच्चा जी महाराज तथा जगदम्बा श्री अम्माँ जी महारानी को दो मान लिया जाय वे माता है, वे पिता हैं, परन्तु तत्त्व तो एक ही आसमान है। ऐसा जानकर तथा उस दर्शन को सत्य मानकर भ्झगवान की लीलाओं का रसास्वादन करना चाहिये। दो शरीरों में व्याप्त एक ही सत्य है, वही चिदानन्द है। ऐसा न मानने वालों को पाप लगता है तथा वे नरक गामी

होते हैं।

परम पूज्य जगदबन्ध श्री चच्चा जी महाराज में उसी सूक्ष्मातिसूक्ष्म परम तत्व का दर्शन करना चाहिये, जिस परम तत्त्व का दर्शन गोपियों तथा गोपागंनाओं को श्री कृष्ण भगवान में होता था। परम पूजनीया अम्माँ जी महारानी ने श्री चच्चा जी महाराज को उनकी ललाम लीलाओं में सहयोग देने के लिये अवतार लिया था। पर ब्रह्मा की एक ही सक्ष्म तत्त्व दो मानवीय रूपों में व्यक्त हो लीलाओं कर रहा था। उनका इदमित्थं समझना सामान्य बुद्धि वालों के लिये अत्यन्त दुरुह है। कहा गया है

"सोइ जानइ जेहि देहु जनाई।

जानत तुमहि तुमहि होइ जाई।। "

श्री चच्चा जी महाराज के कृपा प्रसाद से तथा श्री अम्माँ जी की दयाधार की अपरिमित महिमा से मैं तो उतना ही जानता हूँ, जितना उन्हीं ने जनाया है। भगवान के वास्तविक रूप तथा उनकी सम्पूर्ण महिमा को कोई नहीं जानता। मेरी आत्मा जिस शरीर में निवास करती है वह अत्यन्त अधम है तथा पूर्ण रूपेण पाप पंक में सनी है। परमात्मा स्वरूप श्री चच्चा जी महाराज ने अपनी महती कृपा से तथा जगद्–बन्द्या श्री अम्माँ जी महारानी ने अपनी ममता–मयी विरुदावली का ध्यान कर मेरे सिर पर करुणा–वरुणालय से आर्द्र अपना हाथ रक्खा मैं महसूस करता हूँ वे दोनों एक ही तत्त्व हैं, ब्रह्म–वैवर्त पुराण में अति एक स्थल पर भगवान श्री कृष्ण ने भगवती श्री राधा को सम्बोधित करते हुये कहा है:

" आवयोर्भेद बुद्धिं तु यः करोति नराधमः।

तस्य वासः कालसूत्रे यावच्चन्द्र–दिवांकरो।।

भगवान श्री कृष्ण राधिका जी से कहते है–" जो नराधम तुम में तथा मुझ में भेद बुद्धि करेगा, वह जब तक चन्द्रमा तथा सूर्य रहें मे तब तक काल सूत्र नामक नरक में निवास करेगा।" ऐसी ही अवस्था श्री चच्चा जी में तथा जगजननी श्री अम्माँ जी महारानी की समझना चाहिये। श्री अम्माँ की पूजा सेवा से भगवान श्री चच्चा जी महाराज सन्तुष्ट होते हैं तथ श्री चच्चा जी की पूजा सेवा से श्री अम्माँ जी महारानी सन्तुष्ट तथा प्रसन्न होती है।

"अम्माँ जी सृष्टि रचना अणु परमाणु में।"

जगजननी अम्बिका सृष्टि रचना के अणु अणु तथा कण कण में व्याप्त थीं। वे प्रकाश पुंजिका थीं। ऐसा कैसे होता है यह तो मैं नहीं जानता परन्तु ऐसा सम्भव है और हुआ है।

श्री वेदव्यास ने देखा कि स्वलपायु में ही श्री शुकदेव जी विना जनेऊ संस्कार ही जंगल में संन्यासियों की भाँति अभ्यास करने चले जा रहे हैं। उन्होंने ने कहा "पुत्र पुत्रइति" पिता का ऐसा प्रश्न सुनकर बिना उत्तर दिये चलते गये। शुकदेव जी आगे आंगे बढ़ते चले जा रहे है, उनके पिता वेदव्यास उन्हें पुकार कर रूकने को कहते तो सारी रचना ने उत्तर दिया कि वे साक्षात्परमेश्वर के अवतार हैं अणु अणु कण कण मे व्याप्त हैं वे कृत्यों के सारे बन्धनों से मुक्त हैं।

मैंने श्री अम्माँ जी महारानी की अशरीरी वाणी सुनी है, उन्हे सान्त्वना देते तथा ढ़ाढ़स बँधाते सुना है। ऐसा कहना अतिशयोक्ति नही है कि जगदम्बा, जगवन्द्या अम्माँ जी महारानी सृष्टि के प्रत्येक अ़णु तथा कण में व्याप्त थी। उन्हीं ने मुझे आश्वासन देते हुये कहा था–" व्याकुला न हो मैं तुम्हें पुत्र दूँगी। मैं आज भी मानता हूँ कि मेरे पाँचो पुत्र उनके

प्रसादरूप ही है।

जब प्रथम पुत्र मनु जी की श्रीवास्तव के जन्म का समय था, मैं दिल्ली नौकरी के सिलसिले में गया था। रात्रि में परम पूज्य चच्चा जी महाराज स्वयं मनु जी माता को अस्पताल ले गये और डाक्टरनी से कहा यदि रक्त की आवश्यकता हो तो मेरा रक्त ले लेना। परमात्मा की कृपा से रक्त की आवश्यकता नहीं हुई तथा सामान्य प्रसूति हो गई। उन दिनों अम्माँ जी महारानी तो परदा कर गई थीं परन्तु श्री चच्चा जी महाराज ने प्रत्येक स्तर पर सहायता की।

जब मैं प्रातः दिल्ली से नौकरी का चक्र पूरा कर घर लौटा, तो देख सुनकर सारा वृत्तान्त ज्ञात किया। अम्माँ जी तथा श्री चच्चा जी महाराज दोनों को धन्यवाद दिया। परम पूज्य चच्चा जी अत्यन्त दयालु तथा कोमल ह्रदय हैं। उन्होंने मेरी जितनी सहायता की वह ईश्वरीय प्रेरणा तथा अम्माँ जी की गुप्त प्रार्थना के अतिरिक्त और कुछ नहीं है।

धन्य है ईश्वर का लीला धाम यह अवतार। उन्हीं ने जैसी, जितनी और जैसे मुझ अकिश्चन पर कृपा की है वैसी ही कृपा अन्य अनेकों पर करते रहते हैं तथा करते रहे हैं।

श्री अम्माँ जी के प्रेमं की व्यापकता।"

श्री अम्माँ जी महारानी के स्वयं के चार पुत्र तथा दो पुत्रियाँ थीं। पुत्रों के शुभ नाम श्री श्री 108 जयदयाल जी महाराज जो आजकल उरई में श्री चच्चा जी द्वारा स्थापित सत्संग का कार्य भार सँभालें हैं तथा लाखों जीवों को सन्मार्ग गामी बना रहे हैं। धर्म स्तम्भ सँभालें हुये धर्म के परित्राता की भाँति उसकी रक्षा कर रहे हैं। उनकी धर्मपत्नी पूज्या सावित्री देवी गोलोक वासिनी हो चुकी है। भाई जयदयाल दोनों का भार

सँभाले ब्रह्मविधा की शिक्षा दे रहे है। उनकी धर्मपत्नी परम पूजनीय माता जी कही जाती थीं। इस लोक से प्रयाण के समय उन्होंने मुझे श्री महात्मा जयदयाल जी के सिपुर्द किया था और कहा था –"कल्लू का ख्याल रखना, वह अम्माँ का लाड़िला है। मैं माता जी के पास कभी सत्संग में बैठा भी नही था, परन्तु उनको मेरा इतना ख्याल था। धन्य हैं ऐसी दिव्य शक्तियाँ जो आज भी धराधाम पर अवतीर्ण होकर धर्म स्थापना में योग दे रही हैं भारत इसीलिये भारत है कि यहाँ के अणु अणु कण कण में भगवान व्यक्त हैं तथा नर लीला कर रहे हैं।

श्री अम्माँ जी के दूसरे पुत्र है– श्री कृष्ण दयाल जी महाराज। वे ए0जी0 कार्यालय इलाहाबाद से सेवा मुक्त होकर उस क्षेत्र में धर्म ध्वजा फहरा रहे हैं तथा सत्संग संचालन कर रहे है। भरे पूरे परिवार का भर–सँभाल कर वे आउर्श धार्मिक जीवन व्यतीत कर सत्संग केन्द्र संचालित करते तथा सहस्त्रों आगन्तुकों को सत्पथ पर चलने चलाने की प्रेरणा देते है। जब मैं ललितपुर में पढ़ रहा था परम पूज्य श्री चच्चा जी महाराज भी वही राजकीय सेवा में थे। श्री कृष्ण दयाल जी भी उन दिनों शिक्षार्थी थें। जीवन सादा आड़म्बर मुक्त भारतीय आदर्शो का द्योतक था। पढ़ने में कुशाग्र बुद्धि थें, सत्संगियों को निजी कुटुम्बी जैसा ही समझते थे तथा उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति करते थे। बड़े हो कर शिक्षा प्राप्ति के उपरान्त राजकीय सेवां के सम्बन्ध मे इलाहाबाद गये। सम्प्रति वहीं पर अवकाश प्राप्त कर निवास करते तथा भूले–भटकों को सत्पथगामी बनाते हैं। सच्चे भारतीय जीवन की झाँकी उनमें तथा उनके परिजनों में देखने को मिलती है।

तृतीय पुत्र श्री स्वामी जी है जो ग्वालियर मे शिक्षा विभाग में

राजकीय सेवा मे सम्प्रति अवकाश प्राप्त कर चुके हैं। उनकी धर्मपत्नी तथा सन्तानें सभी सरलता की प्रतिभा हैं, उनका जीवन सात्विक ज्योति से आलोकित है और संसर्ग में आने वाले सभी आध्यात्मिक लाभ अर्जित करते हैं तथा संसार में चिन्ता मुक्त होकर जीवन यापन करते हैं। अम्माँ जी के चतुर्थ पुत्र श्री कृष्णा जी श्रीवास्तव हैं भी भारतीय दर्शन शास्त्र के संस्थान वृन्दावन में प्राचार्य के पद पर नियुक्त हैं।

श्री अम्माँ जी के शारदा देवी (वालाजिया) तथा पुष्पा देवी दो पुत्रियाँ भी थी।

श्री कामेश्वर दयाल तथा रामेश्वर दयाल जी उनके दो ज्येष्ठ के सुपुत्र थे। किशोरी जिया उनके जेठ परम सन्त महात्मा प्रभुदयाल जी की पुत्री थी।

यही नहीं अन्य भी कौटुम्बिक बड़ा परिवार था। वे सब से स्नेह करती थी तथा सभी को समान संरक्षण प्रदान करती थीं। लोकाचार की ऐसी गाथा है कि प्रत्येक पुरुष अथवा स्त्री अपने कुटुम्बी जनों तक अपने स्नेह अथवा प्रेम को सीमित रखते है। परन्तु श्री अम्माँ जी महारानी के प्रेम की यह व्यापकता थी कि उनके सम्पर्क में आने वाले सभी अनुभव करते थे कि वे उसी को सब से अधिक चाहती हैं। मैं तो अम्माँ जी महारानी में जगजननी श्री सीताजी महारानी का दर्शन करता था तथा उन्हें अपनी वास्तविक माँ मानता था। मेरे मन मे ऐसे दृढ़ विश्वास का प्रस्थापित हो जाना श्री अम्माँ जी के प्रेम की व्यापकता का परिणाम ही था। ऐसे निश्छल तथा अप्रत्याशित प्रेम की प्रप्ति सहज अवतरित होने वाली दिव्य शक्ति में ही होती है और वह परम पूजनीया अम्माँ जी में थी। वह ब्रह्म रूपी शैल से प्रादुर्भूता शैल पुत्री ही थीं, सर्वदा तथा सर्व भावेन

ब्रह्म–रूपधारी श्री चच्चा जी महाराज में ही विचरण करने वाली वे ब्रह्मचारिणी थी। ऐसी दिव्य शक्ति के रूप मैं माँ को प्राप्त कर निश्चिन्त उन्हीं में खेला करता था। मेरी इस व्याख्या को समझने के लिये ऐसे शिशु भाव में प्रवेश करना चाहिये जहाँ परमेश्वर ही मात्र स्वरूप में व्यक्त हो लीला करता है। ऐसे शिशु को माँ के अतिरिक्त किसी का ज्ञान भान नहीं होता। उसके पास कुछ भी न हो तो भी वह परम तृप्त तथा सम्पूर्ण निधियों का स्वामी अनुभव करता है।

एक और वृत्ति समझने की है। मैं जन्म से ही परम, अपावन, अकिंचन तथा दरिद्री था, फिर भी माँ से कुछ माँगा नहीं, उनकी क्षत्र–छाया शिशु के समाने खेलता रहा। जो वह उचित समझ देती रहीं लेती रहा और वह सब भी उन्हीं मे उन्हीं के आश्रित समझना रहा। यह सब श्री अम्माँ जी की महिमा तथा उन्हीं का प्रभाव था और है आगे भी रहेगा।

सामान्यतया लोग विविध साधन कर परमेश्वर के जिस स्वरूप को नहीं जान पाते उसका बोध मुझे ऐसा ज्ञान ऐसा भान श्री श्री अम्माँ जी कृपा से ही हो रहा था, यह उनकी अहैतुकी कृपा का परिणाम था। जब कोई दीन हीन असहय होकर भगवान की ओर देखता है तभी भगवान की अहैतु की कृपा प्राप्त होती है। जब मनुष्य अपना बल त्याग ईश्वर की ओर देखता है तभी भगवान की अहैतु की कृपा प्राप्त होती। मेरे सारे बल सारे आश्रय नष्ट हो चुके थे एक मात्र भगवान का ही सहारा था। अम्माँ जी के स्वरूप में वे प्राप्त थे। भगवान माता भी हैं, पिता है, सर्वस्व हैं जो जिस भाव में चाहता है उसे उसी भाव में मिल जाते हैं।

षष्टम योग

"मातेश्वरी राधा"

ज्ञान–विज्ञान शिक्षा

वन्दना

ओंकारस्य कलांसु कल्प लातेकां
माया महामम्बिकांम्
दैवी शक्ति धंरा धरां त्रिताप शमनांम्
विद्यां परां वैष्णवीम्।
दिव्यां दिव्य दिनेश दीप्ति–निलयां
ताप त्रयोन्मीलिनीं
माया मोह विकार मूल दमनां
ध्यायामि कल्याण काम्।।

विगत आख्यानों में कहा जा चुका है कि श्री अम्माँ जी महारानी कभी मौखिक उपदेश नहीं करती थीं। उनके जीवन के प्रत्येक क्षण तथा उनके आचरण नित्य प्रति निरन्तर उपदेश दिया करते थे। उनकी मान्यता थी कि काल भगवान का स्वरूप है, सदकर्मो तथा सद्वचनों से भरी अमृत वाणी द्वारा नित्य तथा निरन्तर काल भगवान की पूजा करनी चाहिये। परब्रह्म परमेश्वर मे जिस प्रयोग के निमित्त सृष्टि का निर्माण किया है उसकी सिद्धि में सहायक बन कर निरन्तर भगवान की पूजा करनी चाहिये। वास्ताविकता तो यह है कि जड़ चेतन सभी को ईश्वर की लीला कला में सहायक होना चाहिये ऐसा ही वे करती थीं तथा इसी प्रक्रिया द्वारा निरन्तर परमेश्वर की उपासना करती रहती थी।

श्री अम्माँ जी के बारे में कुछ कहने का साहस करना धृष्टता मात्र

है। मैं तो उस भाव से उनका मात्र स्मरण कर रहा हूँ जैसे सद्यः जात शिशु माँ की ममता तथा उनके स्नेह भरे महासागर में हाथ पैर चलाता तथा ममता की प्रतिभूति कर रुदन–माध्यम से उसे विखराता हुआ अपनी जिजीविषा मात्र को शान्त करता रहा। प्रसिद्ध कथानुसार जब परब्रह्म परमेश्वर ने बालक ध्रुव ने वेद–वाणी द्वारा परमेश्वर की स्तुति की थी। वह स्तुति तो भगवान के संकेत से प्रभु की शंख के स्वर कर रहे थे। लोक को ऐसा भासित हो रहा था कि बालक ध्रुव स्तुति कर रहा था। वैसे ही सब कुछ माँ कह रही है उनकी ममता के स्वर गुञ्जित हो रहे हैं। लोग कैसा देख रहे है तथा क्या समझ रहे हैं यह तो वही जानते हैं। मैं ऐसा करके श्रीमती अम्माँ जी का स्मरण कर रहा हूँ। जगदम्बा लोक रञ्जन तथा लोक कल्याण निमित्त लीला कर रही हैं।

सामान्य जन इस वास्ताविकता को समझ नहीं पाते हैं। ऐसी मनोवृत्तियाँ भगवान राम तथा भगवान श्री कृष्ण के समय में भी हुई थीं। ऐसे करोड़ों लोग थे जो भगवान राम तथा भगवान श्री कृष्ण को सामान्य जन ही मानते थे। बड़े ऋषियों महर्षियों की व्याख्यानुसार ही लोगों ने उन्हें भगवान का अवतार स्वीकार किया। भगवान राम के विषय में लिखा गया है:–

"गुरु गृह पढ़ने गये रघुराई। अल्पकाल विद्या सब पाई।।"

ऐसा ही उदाहरण श्री चच्चा जी महाराज के बारे में है। अपने गुरुदेव परम सन्त महात्मा जगदबन्ध फ़तेहगढ़ निवासी श्री रामचन्द्र जी महाराज की शरण में ज़ाने के बाद अत्यन्त अल्पकाल में ही उन्होंने लोगों को नित्य भव सागर से पार करते रहे हैं तथा आज भी देह त्याग करने के बाद लोगो को भवसागर से पार अतार रहे हैं। उन्होंने ब्रह्मविद्या

अत्यन्त अल्पकाल में प्राप्त की थी।

परम पूजनीया अम्माँ जी मंहारानी परब्रह्म स्वरुप चच्चा जी महाराज की आहलादिनी शक्ति ही हैं। उनका तथा श्री चच्चा जी महाराज का सम्बन्ध वैसा ही है जैसे भगवान श्री कृष्ण चन्द्र जी तथा श्री राधिका जी का है अधिक गहराई से चिन्तन करने से दोनो एकाकार ही प्रतीत होते हैं। प्रतीत ही नहीं होते अपितु दोनो एक ही हैं।

आह्लाद्रिनी शक्ति वह है जो स्वप्न में भी चच्चा जी महाराज की इच्छा के विरोध में काम न करे। परम पूज्य अम्माँ जी महारानी जगदबन्ध चच्चा जी महाराज की इच्छा के विरूद्ध काम नहीं करती थी, तन मन वाणी उनका अपना कुछ नहीं था। सब परमात्मा स्वरूप चच्चा जी का था तथा चच्चा जी के लिये था। भक्ति का उपदेश इस प्रकार अम्माँ जी अपनी क्रिया–कलाप तथा आचरण द्वारा करती थीं। सच्चा आह्लाद तो तभी प्राप्त होता है जब मनोकामना की पूर्ति होती है। हमारी अम्माँ जी महारानी मन, वचन, कर्म से वही आचरण करती थी जो श्री चच्चा जी महाराज को अत्यन्त प्रिय था। इसीलिये वे श्री चच्चा जी महाराज की आह्लादिनी शक्ति कहलाती थीं। इसीलिये श्री अम्माँ जी महारानी की पूजा से चच्चा जी महाराज की पूजा हो जाती थी तथा श्री चच्चा जी महाराज की पूजा से श्री अम्माँ जी महारानी की पूजा हो जाती थीं। एक ही परमेश्वरी शक्ति जगजननी अम्माँ जी महारानी तथा श्री चच्चा जी के दो शरीरों में खेल रही थी। परम पूजनीया श्री अम्माँ जी महारानी के आचारण का क्रिया–कलाप सारे वेद शास्त्रों की व्याख्या थी। परम पूज्य श्री अम्माँ जी की चारित्रिक लीलाओं में गीता रामायण विम्बित थे।

सर्व प्रथम परमेश्वर ने प्रादुर्भत हो लीला की अथवा उनकी शक्ति

ने, इसका ज्ञात प्राप्त करना जटिल तथा दुरूह है। इस विषय में जितना सोचा जाता है उतना उलझाव पैदा होता है। विचार करने वालों ने थक कर कहा है–"मन समेत जेहि जान न बानी। तरकि न सकहि सकल मुनि ज्ञानी।।" कोई न जानता है, न जान सका है न जान सकेगा। अपनी लीला की ललामता तथा चारुता के लिये भगवान जिसको जितना जनाते हैं वह उतना ही जानता है। " सोइ जानइ जेहि देहु जनाई। जानत तुमहि तुमहि होइ जाई।। यह भी विचित्र व्याख्या है जानने वाला वही, ज्ञान वही, ज्ञान देने वाला वही है। यह त्रिपुटी एक रहस्य है, जो सम्पूर्णतया न खुलती है न जानी जाती है। इसी के विषय में कहा गया है –" को ददर्श प्रथमं जायमानम।। एको सद् विप्राः बहुधा वदन्ति।। ऐसी अनेकों उक्तियाँ, सूक्तियाँ तथा वेदोक्तियाँ है। कालचक्र के तीव्र प्रवाह के साथ रचना का प्रत्येक कण घूम रहा है। परम पूजनीया अम्माँ जी ने अपने तपोबल से उस काल चक्र को रोका है तथा परम पूजनीया चच्चा जी महाराज के काल चक्र को मन्दाति मन्द कर स्वयं उसमें योग देकर रचना को चालित किया है।

अम्माँ जी का सर्वत्र तथा सर्वमय दर्शन

यदाकदा मुझे सर्वत्र तथा सब में परम पूजनीया श्री अम्माँ जी महारानी के दिव्य दर्शन होते थे। इस तथ्य पर भी क्वाचित चिन्तन कर लेना चाहिये। छान्दोग्य उपनिषद द्वितीय खण्ड के प्रथम मन्त्र में अकिंत है–"सदेव सोम्यदमग्रासीत् एकमवाद्वितीयम् हे साम्य रचना क्रम के आदि में एक मात्र अद्वितीय सत् ही था। " वह कैसा था तथा उसमें क्या क्या था इस तथ्य का बताने वाला कोई अन्य था ही नहीं। उसी से सब कुछ हो गया। एक ऐसे तत्त्व का भी सृजन हुआ जिसमें ममता दया कृपा

उत्पत्ति, पालन विकास आदि शक्तियाँ विद्यमान थीं। वही सृजन पालन आदि में सक्षम शक्ति माँ बनी। वही अम्माँ के रूप में प्रादुर्भूत हुई। उसमें क्या क्या था कौन कह सकता है, कोई नहीं कह सकता फिर भी अपने शिशु के निमित्त उसमें सब कुछ था सृष्टि रचना हेतु, उसके संरक्षण पालन तथा पोषण हंतु सब थ। आज भी सब कुछ है वही माँ है, वही अम्माँ हैं उनकी महिमा उन्हीं के गर्भस्थ, पूर्णतया अक्षम एवं असमर्थ शिशु कैसे कर सकता है। उसे सब कुछ प्राप्त होता है। उसी के पालन पोषण निमित्त माँ की ममता के प्रभाव से सारी जीवनीय शक्तियों से शिशु का लालन पालन होता है। जितना ज्ञान विज्ञान, जितनी ऋद्धियाँ सिद्धियाँ अन्यों को प्राप्त होती हैं, माँ अत सबकी अधिष्ठात्री हैं, उन्हीं की कृपा तथ उन्हीं केसंकेतों से प्रासार पाकर वे स1ष्टि में नाना प्रकार के कौतुक करती है। अज्ञान के प्रभाव से वे अलग अलग भासित होती हैं। हमारी अम्माँ अपने पति देवता अर्थात गुरुदेव में पूर्ण रूपेण लीन थीं। जैसे पर ब्रह्म परमेश्वर की समस्त लीला कलाओं का प्रादुर्भाव तथा प्रदर्शन उनकी अपनी शक्ति प्रकृति मं प्रकृति के द्वारा होता है, वैसे ही सृष्टि का संचालन अम्माँ जी द्वारा होता रहता था परमात्मा सारे आश्चर्यों के संस्थान हैं अतः उनमें जो आश्चर्य प्रतिभासित होता है वह सब शक्य ही है।

रचना के जितने अंग प्रत्यगं हैं सब भगवान के गर्भ में ही हैं। इस तथ्य की व्याख्या सभी शास्त्रों तथा श्रुतियों मे यथोचित स्थान पर विद्यमान सब कुछ धारणा तथा पालन पोषण परमात्मा की विशिष्ट शक्ति ही करती है, वहीं शक्ति अम्माँ जी हैं। इसीलिये वे जगदम्बा तथा जगजननी कहलाती है। धर्म उनकी सेवा करता है। ऋृत उनसे त्राण माँगता रहता है।

श्री अम्माँ जी सारी ईश्वरीय शक्तियों की भन्डार थीं। जैसे कोषागार बन्द रहता है, किसी को ज्ञान नहीं होता। उसमें कितना धन है, वैसे ही अम्माँ जी में सारी ईश्वरीय शक्तियों विद्यमान थीं, परन्तु न तो कोई उन विभूतियों को देख सकता था न निरख परख सकता था। वे अविराम गति से परमात्मा स्वरूप श्री चच्चा जी महाराज में विलीन होतीं तथा प्रादुर्भूत होती थीं। यद्यपि वे किसी बन्धन में नहीं थीं परम स्वतन्त्र थीं तथापि ईश्वर की लीला कला की अमिव्यजन्नण में सभी प्रकार का सहयोग प्रदान करती रहती थीं।

श्री अम्माँ जी जहाँ विद्यमान रहीं वे वहीं सच्चिदानन्द का बोध कराती रहती थीं। यही उनकी आध्यात्मिक शिक्षा तथा धर्म का उपदेश था। अपनी रहनी ऐसी बनाओ कि तुम जहाँ रहो वही सच्चिदान्द व्याप्त, वही कृष्ण अपनी आध्यात्मिक विभूतियाँ बिखराता रहे, यों भी कहाँ जा सकता है कि वही सच्चिदानन्द ब्रह्म तुम्हारी सेवा के निमित्त अपनी दैवी विभूतियों को विखराता रहे। यही सत्संग और सत्संग का फल है। यही तमसाच्छन्न वृत्तियों से बाहर जाने का उपाय तथ मार्ग है। सन्त महात्मा मौखिक उपदेश कम करते हैं वे अपनी आध्यात्मिक शक्ति के निपात द्वारा बड़े से बड़े पापियों का उद्धार कर देते हैं। अम्माँ जी महारानी शरणागतों को परमात्मा स्वरूप चच्चाजी महाराज के सामने प्रस्तुत करतीं तथा अत्यन्त विनम्र भाव से उस शरणागत पर दया करने की प्रार्थना करतीं। जब सह वृत्ति जाग्रत होती है, शरणागत भाव का उदय होता है, तभी भगवान द्रवित होते है, उनके द्रवित होने पर ही भगवान की कृपा तथा दया के साथ साथ उनका स्वरूप बोध होता है तथा ब्रह्म का साक्षात्कार होता है। सामान्यतया माँ का हृदय ऐसा द्रवण–शील होता है कि वह

अपने शिशु को सब कुछ दे डालना चाहती है, फिर अम्माँ जी का हृदय तो अत्यन्त विशाल था वे तो जगदम्बा थी।

श्री अम्माँ जी की विशालता का बोध इसी भाव से होता है कि जो उनकी शरण में जाता वही अनुभव करता कि वे उसें सर्वाधिक चाहती हैं। मैं स्वयं ऐसा ही अनुभव करता था। यह अम्माँ जी का सहज स्वभाव था कि वे शरणागत की सदा, सर्वदा तथा सर्व भावेन रक्षा करती थीं।

सप्तम योग

"मातेश्वरी राधा"

मातेश्वरी में हरि दर्शन

मैंने मातेश्वरी (अम्माँ जी) के श्री विग्रह के चारों ओर परम पिता परमात्मा की दिव्य ज्योति का दर्शन किया है। उस ज्योति का उसके रंगो का उससे उदभृत सुगान्धियों, आकृतियों, प्रकृतियों आदि का वर्णन सम्भव नहीं है। ऐसी ही दिव्य विभा के विषय में परम समर्थ कवि सन्त महात्मा गोस्वामी तुलसीदास जी महाराज ने कहा है–

"जो नहिं देख्यों नहि सुन्यो जो मुनहूँ न समान।

सो सब तहँ विलोक्यों राम न देख्यों आन।।"

यही आज तक के वेदों शास्त्रों, ऋषियों महर्षियों आदि आदि का निर्णय तथा निश्चय है कि परम पिता परमात्मा का इदमित्थ वर्णन न किया जा सका है न किया जा सकता है।

पुनः श्री अम्माँ जी को विविध रूपों में देखा। मैने विविध पुस्तकों में श्री सीता जी को, उमा रमा राधा, रूक्मिणी आदि रूपों में भक्तों को उनकी भावनानुकूल दर्शन देने की बात पढ़ी थी, वैसे ही श्री अम्माँ जी महारानी के विविध अवसरों पर दर्शन किया। ऐसी घटनाओं का प्रभाव यह हुआ कि मेरे अन्तःकरणों (मन, बुद्धि, चित्त तथा अंहकार) ने यह समस्त सन्देहों के परे स्वीकार कर लिया कि परम पिता ब्रह्म देव परमात्मा ने उनके स्वरूप में मनुष्याकारी बन अवतार ले लिया है। अब सारा मानचित्र बदल गया। मैंने श्री अम्माँ जी के रूप में भगवती सीता के दर्शन करने लगा। पुनश्च अनेकों दार्शनिक ग्रन्थों को पढ़ा। वेद, वेदांग,वेदान्त, पुराण, गीता, रामायण आदि आदि ग्रन्थों को पढ़ा और

समझने बूझने का अथक परिश्रम किया। सारे अध्ययनों का तथा मनन–चिन्तन का यही परिणाम हुआ कि मेरी भावना दृढ़ से दृढ़तम हो गई। मेरा स्वयं का एक मत बन गया। मैने निर्षकर्श निकाला कि परम पूजनीया अम्माँ जी के रूप में साक्षात परमेश्वर ने अवतार ले लिया है। मैं यह तथ्य भूल गया कि मुझे जैसे महापापी को विना किसी प्रयत्न तथा प्रयास के ब्रह्मदेव दर्शन क्यों देंगे। इस का उत्तर अन्तकरण ने यह दिया कि भगवान परम दयालु तथा कृपालु हैं, उनका उद्घोष है कि–

" कोटि विप्र वध लागै जाही।

आये शरण तजौं नहि ताही।।"

भगवान की यह घोषणा मुझे अक्षरशः सत्य प्रतीत हुई। मेरे पूर्व कृत पापों की इति–श्री हो गई। यह कैसे हुई इस रहस्य को भगवान ही जानते हैं सामान्तया परमेश्वर तथा उनकी शक्तियों के चित्र भक्तों तथा सन्त कवियों ने अपनी–अपनी भावनाओं के अनुरूप देखे है तथा तदनुसार ही उनके वर्णन किये हैं। परमेश्वर निराकार है अथवा साकार इसका निर्णय आज तक सिद्धान्तवादी–असिद्धान्तवादी तथा सामान्य जनों ने ऐसा नहीं किया है जिसके विषय में सभी विवाद मुक्त होकर सहमति प्रदान कर सकें। वेद भगवान ने कुछ कुछ कहने का प्रयास किया परन्तु वे भी अन्ततोगत्वा मौन ही रह गए। अन्त में लक्षणावृत्ति के माध्यम से उस परम तत्व के इंगित करने का साहस किया। परम सन्त महात्मा गोस्वामी तुलसीदास जी ने लिखा है–

नेति–नेति कह निगम निरूपा।

निराकार निरूपम सुर भूपा।।

गीता–शास्त्र के एकादश अध्याय में अर्जुन ने भगवान के विराट

रूप का दर्शन किया, उस रूप मे भी उसने वही और उतना ही देखा जितना उसकी उपनी कल्पना में समा सकता था, वह ज्यों–ज्यों देखने का प्रयास करता था,त्यों–त्यों नयी–नयी आकृतियाँ घटाएँ छटायें उसको दृगगोचर होती थी वह भय–ग्रस्त हो गया और उस सर्वाकृतिधारी भगवान से प्रार्थना करने लगा कि–"हे प्रभो, हे जगदीश्वर मै आपके स्वरूप में जो देखना चाहता हूँ, वह तो दिखायी पड़ता ही है इसके अतिरिक्त और जाने कहाँ खिचा चला जा रहा हूँ जहाँ जीवन हे या मृत्यु मुझे इसका भी ज्ञान नहीं हो रहा है मेरे सारे शरीर मे भंय व्याप्त है और मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा है कि आप सारी प्रतीतियों तथा परिकल्पनाओं के आगे भी हैं इसलिये आपके स्वरूप का वर्णन माया–मण्डल के भीतर नहीं हो सकता। आपके पावन स्वरूप के दर्शन का प्रयास में आपके द्वारा प्रदान की गयी दिव्य चक्षु से करने का प्रयास कर रहा हूँ परन्तु किसी भी प्रकार को सफलता प्राप्त नहीं हो रही है मुझे ऐसा आभास हो रहा है कि मैं स्वयं अपनी आकृति को आपके विराट स्वरूप मे लय करता चला जा रहा हूँ और जो कुछ ज्यों–ज्यों दिखायी पड़ता है वह सब आपही का स्वरूप है मेरा स्वरूप भी आपमें खो गया है मुझे इस समय यह भान नही हो रहा है कि मुझमें आप है या आपमें मैं हूँ सारी शक्तियाँ समग्र प्रकृति तथा उसकी आकृतियाँ आपमे खो जाती हैं। पुनःप्रादुर्भूत हो जाती हैं, मै अत्यन्त भय त्रस्त तथा भयग्रस्त हो रहा हूँ मुझे सारा भय तथा समस्त संत्रास अज्ञान की वृत्तियाँ प्रवृत्तियाँ ही प्रतीत होती है देवाधिदेव परमेश्वर मुझे इतना होश बाकी है और इतनी चेतना है कि मैं आपके उस स्वरूप का दर्शन करूँ जो हममें और आपमें दृष्टा तथा दृश्यभाव बनाए रखता था जिसमें प्रविष्ट होकर में आपको अपना बान्धव देखता था–"ऐसा

कहते कहते अर्जुन चेतना रहित होकर भगवान के समक्ष नही बैठ गया। क्षण भर में पुनः उसकी आँखे खुलीं तो उसने देखा कि उसके सामने भगवान का वही चतुर्भुज रूप मंद–मंद स्मितियो से आप्लावित विद्यमान है जिस स्वरूप के साथ अर्जुन उनको सखा रूप मे मानकर उनके साथ नाना प्रकार के बांछित अंवछित व्यापार करता था। अर्जुन ने आगे पुनः देखा कि जो भगवान इतने विराट है इतने शक्तिमान है इतने मोहक है तथा जिनका अंग–अंग तीनों लोक पर शासन करने मे सक्षम है मैने उनके साथ मैने उनके साथ जैसा व्यवहार किया वह सर्वथा अनुचित था और धृष्टता ये सम्पन्न था। अतः उसे कुछ भी नहीं सुझा और उसने हाथ जोड़कर भगवान से प्रार्थना करना प्रारम्भ किया–"हे त्रिलोकी नाथ, हे समग्र परिकल्पनाओं के परे, हे दीनबन्धु, हे दयासिधों, हे करूणा व करुणालय, मुझे ऐसा लगता है कि मैने आज तक ज्ञान अथवा अज्ञान के वशीभूत हो आपसे नाना प्रकार का जो व्यवहार किया है घृष्ठता से पूर्ण रहा है, आपने हमारे समस्त अवांछनीय व्यवहारों को वैसे ही क्षमा किया है जैसे पिता–पुत्र के अपराधों को क्षमा करता है तथा जैसे सूर्य अंधकार के समग्र समूहों को अपने में धारण करता हुआ उसकी अज्ञान जन्न समग्र दुर्वृत्तियों को क्षमा करता है आप कृपया हमारी समस्त धृष्टताओं को क्षमाकर हमें उसी चतुर्भुजरूप का दर्शन दीजिए। जिसका दर्शन करके मेरे नेत्र निरन्तर तृप्ति प्राप्त करते थे मैं समस्त तर्को वितर्कों के परे खडे होकर निवेदन करता हूँ कि मैं वही करूगाँ, जो आप आदेर्शित करेगें।

सम्पूर्ण गीता शास्त्र, श्री कृष्ण अर्जुन का सम्वाद, सारे वेद वेदांगों का चिन्तन मनन, सारे उपनिषदों का सार तत्त्व यही है श्री अम्माँ जी महारानी तथा परम पूज्य जगदबन्ध्य चच्चा जी महाराज एक ही सिक्के

के दो पहलू हैं उनके दर्शनो मे ब्रह्म विद्या का लीला विकास है।

श्री अम्माँ जी की सेवा, पूजा तथा भक्ति से भगवान तृप्त होते हैं। श्री अम्माँ जी मूर्ति–मती श्रुतियों की पुत्रीभूत वृत्तियाँ हैं, उनकी आज्ञा पालन में ही भगवान की तृप्ति की कल्याणी वृत्ति है। जो उचित–अनुचित हानि लाभ का विचार किये बिना उनकी आज्ञा का पालन करता है, सारे देवता तथा समग्र रचना उनसे तुष्ट रहते हैं वे परम भाग्यशाली हैं तथा भगवान की महारास के सहभागी हैं। भगवान स्वंय अपने स्वरूप में विहार करते हैं यही उनकी रास लीला है। कुछ कहते हैं श्री मदभागवत में, रास लीला में तथा महारास केलि कलाप में राधा का कही नाम नही है। ऐसा होने में भागवत कार की दक्षता ही है। राधा ही स्वयं भगवान की आराधना कला हैं वे स्वंय में विहार करती हैं। इस गूढ़ रहस्य को वही समझते हैं जिसे भगवान कृपा कर समझा देते है। कभी घबड़ाने अथवा अभ्यास त्याग कर पलायन नहीं करना चाहिये प्रत्येक दशा में भगवान की कृपा–बिन्दु प्राप्त करने की प्रतीक्षा करनी चाहिये। प्रतीक्षा में भी अद्भुत आनन्द है। किसी शायर ने कहा है :–

" जो मजा इन्तजार में आया।
नहीं बह वस्ले–यार में आया।।"

परम पूजनीया श्री अम्माँ जी के चरणों में बैठकर उनके सामने वैसे ही रोना चाहिये जैसे भूखा शिशु माँ की दया पाने के लिये उनके सामने उस समय तक रोता है जब तक माँ द्रवी–भूत नहीं होती और उस भाव का उदय होने पर शिशु को गोद में नहीं उठा लेती तथा उसे अपनी दया से द्रवी–भूत अमृत रस का पान नहीं कराती। माँ के हृदय में उमड़ते दया समुद्र का आदि अन्त नहीं है, शिशु के अपराध भी अथाह है परन्तु

माँ की दया के अतिरिक्त कोई और उपाय उसके स्नेह सुधा के प्राप्त करने का नहीं है।

दिव्य दर्शन

श्री मदभगवद्‌गीता के एकादश अध्याय में भगवान श्री कृष्ण के उस दिव्य रूप की झाँकी के दर्शन हैं जो उन्होंने अर्जुन को दिखाया था। अर्जुन के व्यामोह को नष्ट करने के लिये भगवान ने अपने उस रूप का दर्शन कराया था। दर्शन के उपरान्त अर्जुन का व्यामोह नष्ट हो गया था और अपने अज्ञान तथा संशय को त्याग युद्ध के लिये उद्यत हो गया था। भगवान ने परम सत्य तथा उसके प्रभावों का दर्शन करा, अर्जुन के मोह को नष्ट कर दिया था।

श्री अम्माँ जी महारानी अपने स्वरूप तथा प्रभाव का दर्शन करा शिष्यों तथा शरणागतों के लिये पृथ्वी पर ही स्वर्ग निर्माण कर देती थी। जिनका संस्कार था अथवा जिनका ईश्वर में विश्वास था, तथा जिनका श्री अम्माँ जी के चरणों में प्रेंम था उनको स्वर्ग की विभूतियों का अनुभव होता और वे मानव लोक में ही श्री अम्माँ के प्रभाव तथा प्रताप को अनुभव करते थें।

भक्त श्री अम्माँ जी के प्रभाव तथा प्रताप का अनुभव करते थे। इस विषय में मैं अपने अनुभवों का वर्णन कर रहा हूँ। मैं लौकिक दृष्टि से दीन–हीन तथा आश्रय–विहीन, जन्म जन्मान्तर के कुसंस्कारों तथा पातक पुज्जों के समस्त यातनाओं को भोग रहा था परन्तु एक आधार अवलम्ब यह था कि मैनें सम्पूर्ण पाप तापों से छुड़ाने वाली भगवती श्री सीता जी महारानी को अपनी माँ तथा भगवान श्री राम को अपना पिता माना। मेरे सभी परिजनों का निधन जब मैं (3) बाल्यावस्था में था तभी हो गया था।

मुझे शोक अथवा आश्रय विहीनता का अनुभव नहीं होता था, अपितु मैं यह अनुभव करता कि मुझे त्रिलोकनाथ के आश्रय प्राप्त हो चुका था। मैं जब जहाँ रहता अन्स्थ होने का विचार भी न आता था। मुझे किसी प्रकार की कभी का भी आभास नहीं होता था। निरन्तर पवन देवता आश्वस्त करते और कहते–

अनाथ कौन है यहाँ त्रिलोक नाथ साथ है।

दयालु दीनबन्धु के बड़े विशाल हाथ है।।"

माँ को ऐसा प्रताप प्रभाव था कि मुझे किसी प्रकार के अभाव की प्रतीत न होती थी।

इस मायिक लोक में रचनाकला की जैसी प्रतीति होती है आध्यात्मिक लोक की प्रतीति उससे भिन्न है। वहाँ तो सब कुछ एक रूप परमानन्द मय ही है। श्री अम्माँ जी निरन्तर अपने दिव्य लोक में अथवा दिव्य लोक की दिव्य विभूति में निवास करतीं तथा पति परमेश्वर की सेवा में निमग्न रहती थी, अतः उनके प्रभाव से समग्र दृश्य चिदानन्द मय उदभासित होता था। ऐसा प्रतीत होता था कि स्वर्ग एवं अपवर्ग की समग्र कलायें श्री अम्माँ जी के सान्निघ्य में व्याप्त रहती थीं। उनके प्रभाव क्षेत्र में निवास करने वाले चिन्ताओ से मुक्त अद्भुत आनन्द का अनुभव करते थे। मैं सर्वदा ऐसा ही सुख अनुभव करता और उस चिन्मय अविनाशी स्थिति का अनुभव करता था जहाँ अभाव का अभाव तथा सहज ही कल्पतरु की छाया प्राप्त थी।

अन्य संसारी लोगों की भाँति ही मेरी भी सांसारिक अभिलाषायें थीं, मुझे भी सांसरिक अभाव थे परन्तु किसी प्रकार की इच्छा या वेदना न थी। किसी लौकिक अथवा–पारलौकिक निधि की प्राप्ति की कामना होते ही ऐसा विचार पैदा होता कि जगदम्बा की प्राप्ति के उपरान्त किसी भी कामना का उदय होना अज्ञान का प्रभाव मात्र है। कामना स्वतः विलीन हो जाती थी।

"मातेश्वरी राधा"

चमत्कार

लोग सामान्यतया चमत्कार ऐसे क्रिया कलापों को कहते हैं जिसे सामान्य जन नहीं कर पाते तथा जिसके लिये लोग देवी देवताओं तथा ऋषियों महर्षियों आदि का आश्रय ढूँढ़ते हैं। ऐसे कार्य लोक में निरन्तर होते रहते हैं। ऐसे कार्यो के सम्पादतार्थ ही लोग जपतप उपासना व्रत आदि करते हैं। सन्त महात्मा उन प्रक्रियाओं तथा प्रभावोत्पादक कृत्यों को चमत्कार कहतें है जिनसे सात्विक वृत्तियों का जन्म होता है। ऐसी वृत्तियों को सदाचार कहते है। जिस खण्ड के निवासियों मे सदाचार पाया जाता है। वह खण्ड ही स्वर्ग तथा अपवर्ग है। साकेत में भगवान राम ने घोषणा की है:–

मैं नहीं यहाँ सन्देश स्वर्ग का लाया।

इस भूतल को ही स्वर्ग बनाने आया।।"

श्री अम्माँ जी महारानी स्वयं उसी ज्योति में लीन परमात्मा स्वरूप परम सन्त महात्मा भवानी शकंर जी महाराज की धर्मपत्नी पावन गंग तंरग समान थी वे अपने अश्रितों तथा सत्संगियों में सहज ही आदर्श मानव के चरित्रों का उदय कर देती थीं। उनके अश्रितों मे निर्भयता का भाव उदित था। वह स्वयं को अपने आप में पूर्ण समझता थी। यह पूर्णता श्री अम्माँ जी महारानी की कृपा का प्रसाद था । किसी अभाव की प्रतीति होते ही दूसरे ही क्षण यह भाव उदय होता कि–

गुरु समर्थ शिर पर खड़े शोच तोहिं का दास।

ऋद्धि, सिद्धि सेवा करै मुक्ति न छाड़ै पास।। "

ऐसी अनुभूति मुझे निरन्तर होती रही। परिणाम यह हुआ कि मेरे सारे लौकिक कार्य स्वतः सिद्ध हाते और मैंने प्राप्त जीवन को अभावों से मुक्त होकर यापन किया। मुझे धीरे–धीरे ऐसी अनुभूति होने लगी कि श्री अम्माँ जी महारानी पर ब्रह्म की दिव्य विभूतियों से सम्पन्न ब्राही कला हैं, वे ही सृष्टि को मातृ–छाया प्रदान करती है, अपने सहज स्वभाव से उन्ही माँ की ममता की दया दृष्टि मुझे प्राप्त होगई है उसी के प्रभाव से मै अत्यन्त दीन तथा अनाथ होते हुये भी जीवन में किसी समस्या का सामना नहीं कर सका। जीवन में जब जो समस्या आई, उसके समाधान में अदृश्य से सहायता मिली तथा मैं चिन्ता मुक्त हो गया। अम्माँ जी की छाया कल्प लता के समान थी। पीछे कहा जा चुका है कि सन्त महात्मा स्वयं चमत्कार नहीं करना चाहते, परन्तु जो उनकी शरणागत होते है उनके निमित्त स्वतः ही ऐसी विभूतियों की प्राप्ति होती है जो अद्भुत और चमत्कारिक होते है। मेरे मन में स्वयं एक धारणा बन गई कि परम पूजनीया अम्माँ जी महारानी जग ननी श्री सीता जी की अवतार है इस भावना के साथ अन्य सारी भवनाओं तथा नातो रिश्तों के गुम्फन का योग था, मै ब्रह्म–विद्या आदि से रिक्त था परन्तु श्री अम्माँ जी महारानी का चिन्तन ही परम तृप्ति प्रदान करता यह सब श्री अम्माँ जी के प्रताप तथा सामर्थ्य का प्रभाव था । मैं तो इसे एक चमत्कार ही मानता हूँ।

मैं हाईस्कूल की परीक्षा पास कर निश्चन्त श्री अम्माँ जी की कृपा का दया के अवलम्ब मे घूमता था। सामान्यतथा सभी को आगे पढ़ने की या अथवा व्यवसाय के सुयोग की खोज होती है। मैं किसी चिन्ता में निमग्न न था। सामान्य व्यय वहन निमित्त कुछ ट्यूशनें कर लेता तथा परम पूजनीया अम्माँ जी की छत्र–छाया में खेल–कूद में जीवन यापन

करता था। दीन या दुनिया किसी की किसी प्रकार की चिन्ता न थी।

मैं भारत की उन मान्यताओं तथा विश्वासों पर अटूट विश्वास करता जिनके वशीभूत हो लोग पाषाणो पाषाण प्रतिमाओं, वृक्षों लतागुल्मों में भगवान के दर्शन करते, उनकी पूजा करते तथा अपने कार्यो को सिद्ध करते है। लोक प्रसिद्ध भक्त मीरा ने प्रतिमा में कृष्ण भगवान की झाँकी देखी, उन पर आसक्त होगई तथा अपने इष्ट की प्राप्त की। वह पाषाण प्रतिमा में भगवान को साक्षात कर तन, मन, खो बैठी और गाने लगी।

" मोरे तौ गिरधर गोपाल दूसरो न कोई।
जाके सिर मोर मुकुट मेरौ पति सोई।।
सन्तन संग बैठ बैठ लोक लाज खोई।
अव तो बात फैल गई जानै सब कोई।।

पाषाण प्रतिमा में भगवान के दर्शन कर वह आसक्त हो गई तथा जगन्नाथ भगवान को प्राप्त कर कृत–कृत्य होगई।

ब्रज वासियों ने गोवर्द्धन पर्वत में भगवान को प्राप्त किया तथा कथा विश्व–विश्रुत हो गई। गोवर्द्धन पूजन अर्चन तथा इन्द्र के मान मर्दन की कथा श्री मदभागवत में रोचक ढ़ंग से विस्तार पूर्वक लिखी गई है।

ईश्वर मै श्रद्धा रखने वालो को मैं ग्रामीण क्षेत्रों में नीम के पेड़ में पीपल के पेड़ मे तथा अन्य ऐसे ही स्थलों में भगवान के विविध रूपों तथा, दुर्गा माँ आदि महाशक्तियों की पूजा करते देखा है तथा वहीं पर भगवान के उन्हीं स्वरूपों की अर्चना कर अपना कार्य साधते देखा है। ऐसी घटनाओं का ध्यान मे रख तथा श्री अम्माँ जी में ईश्वरीय तथा शक्तियों की विद्यमानता देख मैं उन्हें श्री सीता जी की अवतार मानता था उन्हीं के माध्यम से उपयुक्त भावनाओं से प्रेरित मैं परम पूजनीया अम्माँ जी में

जगजननी भगवती सीता के दर्शन करता था और अपनी मनो कामनायें पूर्ण करता था। इसी दृढ़–विश्वास की छाया में मैं निश्चिन्त जीवन का आनन्द ले रहा था। श्री अम्माँ जी का प्रभाव तथा उनके योग वैभव के विस्तार के कारण ऐसा प्रतीत होता कि मेरे सारे कार्य स्वतः सिद्ध हो जायेंगे। अम्माँ जी जहाँ निवास करतीं स्वर्ग वही डेरा डालता, अपवर्ग वहीं चिदानन्द वैभव विखराता था। प्रत्येक योग वल्लरी आश्वस्त करती और कहती –

" गुरु समर्थ सिर पर खड़े शोच वोहिंका दास।
ऋद्धि, सिद्धि सेवा करै मुक्ति न छाड़ै पास।।"

ऐसा अपरिमित तथा अद्भुत व्यापार नहीं देखा न सुना गया है। माँ की याचना करने वाले को माँ मिलती है और जैसे माँ की क्षत्र छाया में शिशु निश्चिन्त तथा निर्द्वन्द शैशव यापन करता रहता है, वैसे ही मै शैशव भावापन्न अपना जीवन व्यतीत करता था। यह चिन्ता माँ को थी कि इसे कब क्या चाहिये। एक दिन सन्ध्या वेला में मैं अम्माँ जी के पास बैठा था, अन्य सत्संगी तथा सत्संगिने भी विद्यमान थी –" अम्माँ जी ने मुझे सम्बोधित कर कहा– " कल्लू डाकखाने में कुछ लिपिकों की नियुक्ति हेतु आवेदन पत्र माँगे गये है, तुम अपनी नियुक्ति हेतु प्रयास करों। मैने आज्ञा पालन किया। घोषित परिणाम में मेरे पास विभाग से सूचना आई– "परीक्षा में उत्तीर्ण किन्तु नियुक्ति क्रम में नही आ सके।" मैने परिणाम को अम्माँ से निवेदन कर दिया। अम्माँ जी क्वचित गम्भीर हो कहा–" अब तुम को नौकरी हेतु प्रयास न करना। जब नौकरी स्वयं ही तुम्हारे पास आये तो स्वीकार कर लेना। अम्माँ जी के इस प्रयास से उनकी त्रिकालज्ञता एवं सर्वज्ञता पर तो प्रकाश पड़त्प ही है, यह भी स्पष्ट होता

है कि उनको अपने शरणागतों की कितनी चिन्ता रहती थी, तथा शरणागतों की कितने निश्चन्त हो खेलकूद मे जीवन यापन करने थ। मैं अम्माँ जी की आज्ञा की शिरोधार्य कर निचिन्त विचरण करने लगा। एक महीने बाद उसी आवेदन पत्र के सन्दर्भ मैं पुनः पूछा गया–"यदि आप आर. एम. एस. विभाग काम करना चाहे तो सूचित करें, मैंने श्री अम्माँ जी से निवेदन किया। उन्होंने कहा अब तो नौकरी तुम्हारे पास आ गई है उसे स्वीकार कर लेना चाहियै। मैंने निवेदन किया,"यदि नौकरी आपके पास मिलेगी तो करुँगा अन्यथा नही। अम्माँ जी ने अत्यन्त सहज भाव मे कहा –" तुम्हारी यह इच्छा भी पूरी होगी, प्रयत्न करो। मैंने स्वीकृति भेज दी तथा आर0एम0 एस0 झाँसी में नियुक्त हुआ और मातेश्वरी के आशीर्वाद से सम्पूर्ण नौकरी की अवधि झाँसी में ही व्यतीत की।

मातेश्वरी का प्रताप कितना महिमा मण्डित था, उसका अनुमान एक घटना से हो जाता है। इसके अतिरिक्त अन्य सारी घटनायें अम्माँ जी की शरणागत वत्सलता तथा दीन जन भय हारिणि होने का प्रमाण देती हैं।

नौकरी के ट्रेनिंग चक्र की अवधि में डाकखानों के नाम याद करने होते हैं। मुझे याद होते ही न थे और अधिकारी क्रुद्ध था। वह बहुधा कहा करता था कि मेरी नौकरी पक्की न हो सकेगी और निकाल दिया जाऊँगा। मैंने श्री अम्माँ जी महारानी को तथ्यों की सूचना दी । वे मुस्कराई पुनः गम्भीर ही बोलीं, मै जिसे नौकरी दे चुकी उसे कौन निकाल सकता है। तथ्य भी ऐसे ही सामने रहे। मै सम्पूर्ण अवधि पूरी कर कें ही रिटायर हुआ। नौकरी की अवधि भी ऐसे बीती मानो क्रीड़ा एवं केलिकलाप में समय व्यतीत हुआ। अम्माँ जी ने ही मेरा विवाह किया

तथा निरन्तर रक्षा करती रहीं। ऐसे गुरु–द्वार तथा एसे सदृगुरुओं की छाया अन्यत्र मिलना दुर्लभ ही है। दीन तथा दुनिया दोनों सरलता पूर्वक सँवर गये।

मैं सम्प्रति डाक तार विभाग के रेल डाक व्यवस्था विभाग में लगभग 37 वर्षो का कार्यकाल पूर्ण करके अवकाश प्राप्त जीवन जून 1977 से यापन कर रहा हूँ। मैं अनुभव करता हूँ कि मेरे जीवन का प्रत्येक क्षण श्री अम्माँ जी महारानी की कृपा तथा दया का प्रसाद है। प्रत्येक क्षण श्री अम्माँ जी के प्रसाद स्वरूप उदय हुआ तथा उसकी प्रत्येक घटना उनके चमत्कारों की अभिव्यज्जंना तथा उनके चमत्कार की भूमिका मात्र है जिसका लुत्फ वही ले पाते हैं जो यथार्थ समझते तथा वास्तविकता का अनुभव कर पाते हैं। भगवान के अवतारो के साथ उनकी महाशक्तियों ने अपने क्रिया–कलापो द्वारा जिन चमत्कारों को प्रगट कर लोकरज्जन किया है वे सभी श्री अम्माँ जी ने परमात्मा स्वरूप चच्चा जी महाराज के सान्निध्य में किया है।

परमेश्वर की सृष्टि में सभी कुछ चमत्कार है इसका विधिवत विज्ञान शास्त्रज्ञों, चिन्तकों तथा ईश्वर के विशेष कुपापात्रों का होता है। विशिष्ट परिस्थितियों में उजागर होने वाले चमत्कार सन्तों तथा महात्माओं के क्षेत्र में उन्हीं की विशेष कृपा से होता है। यह जन सामान्य में श्रद्धा विश्वास तथा धार्मिक कृत्यों में अभिरूचि जमाने के लिये होता है। श्री अम्माँ जी महारानी जगजननी है उनसे सम्पृक्त ऐसे चमत्कार भी समय समय पर हुये है। मात्र दो एक ही का चर्चा कर आगे की विशिष्ट गति –विधियों की व्याख्या का प्रयास करूँगा।

परब्रह्म परमात्मा की रचना का क्रम विचित्र है इसका वर्णन अद्भुत

तथा इसका रहस्य गूढ़ातिगूढ़ है। इसके भीतर प्रवेश कर भगवान के स्वरूप का दर्शन अद्भुत है, उसकी वास्ताविकता उसी को ज्ञात होती है जिसे भगवान ज्ञात कराना चाहते है। अर्जुन को भगवान ने अपने स्वरूप का सविस्तार वर्णन सुनाया। वह सुनता गया तथा सुनने का आनन्द भी लेता गया, परन्तु वास्तविक बोध तो तब हुआ जब भगवान ने दिव्य प्रदान की।

" न तु मां शक्यसे दृष्टुं अनेनैव स्व चक्षुषा।
दिव्यं ददामि ते दृष्टिः पश्य मे रूपमैश्वरम्।।"

परम पूज्य चच्चा जी महाराज तथा विश्व वन्द्या अम्माँ जी परब्रह्म की समस्त विभूतियों को लेकर लीला कर रहे थे। परम सन्त महात्मा तुलसी दास जी ने संकेत किया है कि भगवान के इदमित्थं स्वरूप का वर्णन कोई नही कर पाता। सृष्टि रचना में होने वाली लीला की सार्थकता हेतु सब अपनी अपनी भावना के अनुसार हरि दर्शन करते है–

' ज्येहि उर रहा जाहि जस भाऊ।
सो वस देख्या कौशल राऊ।।

श्री अम्माँ जी का सम्पूर्ण जीवन चमत्कार से आप्लाविर्त था। उनके जीवन के क्रिया–कलापों का समूह लहराता हुआ प्रंम का समुद्र था। ब्रह्म–ज्ञान उनके चरित्रों का परिमार्जन करता था। जहाँ वे निवास करतीं वहाँ के अणुअणु कण कण स्वतः उपदेश करते रहते थे। मण्डन मिश्र के आश्रम के शुक सरिका भी ब्रह्म सूत्र की व्याख्या करत तथा शास्त्र की भाषा मे ही बात करते थे। श्री अम्माँ जी के निवास सदन के अंग अंग ब्रह्म–ज्ञान का उपदेश प्रेम के भाषा विज्ञान मे करते रहते थे।

मै स्वयं अम्माँ जी का चिन्तन करते ही चिन्ताओं से मुक्त तथा

परमात्मा के कवच के त्राण मे पाता था। ऐसा उनकी करूणा दया तथा दीन वत्सलता के प्रभाव का परिणाम था।

मैं एक ऐसा चरित्र अम्माँ जी के चरणों की शरण में था, जिसका अपना कोई नही था और जिसके पास अश्रु निपात के अतिरिक्त कोई ध्‍ान न था। पाप की अमाप वृत्तियों ने मुझे अपने बाहु पाश में जकड़ रक्खा था। सर्वोपरि एक ही वृत्ति थी कि मै अम्माँ में उनके प्रकाश चक्र के संरक्षण में निवास करता हूँ, मुझे कर्मक्षेत्र में अपनी लीला कला के व्यापार का सम्पादन करने वाला महा मृत्यु के रंग से अनुरंजित माया का व्यापार किसी प्रकार से प्रभावित नहीं कर सकता हैं। मेरा दृढ़ निश्चय था और है कि अम्माँ जी एक आईना हैं जिनमें ब्रह्म अपनी विविध कलाओं सहित विंबित होता है। यह विचार दर्शन समस्त ग्रन्थों तथा शास्त्रों का सार है। ज्ञान वैराग्य तथा योग आदि की शिक्षा का प्रभाव था जो मेरे भीतर उपर्युक्त भाव उदय हुयें थे। श्री अम्माँ जी तथा विश्व वन्द्य चच्चा जी महाराज की अपनी विद्या है जिसके आलोक में मेरे भीतर उपर्युक्त भाव उदय हुये थे। परम पूज्य चच्चा जी महाराज तथा विश्ववन्द्या अम्माँ जी महारानी की आत्म कला का प्रभाव था कि मेरे भीतर सत्य की यह ज्योति जाग रही थी।

इसके प्रताप से मैंने कभी सोचा भी नहीं कि मेरा कोई नहीं है और मैं अनाथ हूँ। वास्तविकता यह है कि जो लोग परमेश्वर तथा उनकी आद्याशक्ति को त्याग किसी और के सहारे तथा सहायता की आशा करते है वे अहंकार को अपना नाथ बनाकर जी रहे है। उनका स्वयं का कोई नाथ नहीं है। अहंकार तो स्वयं एक विकार है वह किसी का नाथ क्या बनेंगा। मैं आद्याशक्ति रूपा अम्माँजी कें चरणों मे निरन्तर रहता था और हमारी स्पर्श मनोकामनाये पूरी होती थीं। भगवती दुर्गा का उद्घोष है :–

" सर्वा बाधा विनिर्मुक्ता धन धान्य सुतान्वितः।

मनुष्यः मत प्रसादेन भविष्यन्ति न संशयः।।

"मातेश्वरी राधा"

परमात्मा स्वरूप विश्ववन्द्य श्री चच्चा जी महाराज ने अपने जन्म काल से ही योग साधना सिद्धयों प्रत्येक अंग में अवतीर्ण किया। श्री अम्माँ जी महारानी ने सर्वत्र सर्वदा सर्वभावेन अपने चरित्र की पावन सतो गुणी धारा को चच्चा जी महाराज की लीला कला से सम्पृक्त किया तथा ग्रहस्थ आश्रम के आदर्शो को पालन करत हुए अपने जीवन की प्रत्येक यति गति में परम–ब्रह्मा की लीला कला को व्यतीत किया। साधना की प्रत्येक अवस्था को पार कर लेने पर लोक कल्याण तथा लोक शिक्षा देने की दृष्टि से नित्य निरन्तर नई लीलायें की तथा उनके द्वारा लोक रज्जंन किया।

उनके जीवन चरित्र भाग–2 में दोसंस्मरण घटनायें मुकंद्रित हैं। वे पूज्य पाद श्री चच्चा जी द्वारा स्वयं लिखी गई। मुझे परम पूज्य चच्चा जी महाराज परम भक्त तथा आचार्य पदवी प्राप्त डाक्टर ब्रजवासी लाल जी (महात्मा) द्वारा साभार प्राप्त हुई हैं, उनको मैं यथावत् प्रकाशित कर रहा हूँ थोड़ा व्याख्यात्मक व्यौरा इसलिये देदिया है कि पाठक बन्धु शनैः शनैः वास्तविकता की ओर झुकें। वास्ताविक झुकाब तो ईश्वर तथा सदगुरू भगवान की प्रेरणा तथा उन्ही की कृपा राशि से होती है, परन्तु उसे प्राप्त करने के लिये अपने संकल्प तथा अपनी निश्चयत्मिका बुद्धि तथा वृत्ति से होती है जिसके लिये सत्संग तथ सद् विचार की महती आवश्यकता है। इस प्रक्रिया को निज कृपा कहा जा सकता है।

जिस समय की घटनाओं का वर्णन किया गया है वे उस काल की हैं जव चच्चा जी महाराज योग साधना की बड़ी बड़ी घाटियाँ उतर

चुके थे तथा भगवान की लीला में सहयोग दे रहे थे। श्री अम्माँ जी महारानी तो सदा सर्वदा आसें याम मूर्ति–मती सिद्धि के समान रहती थीं। संस्मरण में अल्लिखित घटनाओं के अनुसार भगवान गुरूदेव उनकी निरन्तर रक्षा तथा सहायता करत थें। माया समुद्र इतना विस्तीर्ण तथा दुर्गम घाटियों से भरा है कि इसे विना सद्गु रू की कृपा तथा सहायता के पार कना असम्भव है। संस्म्रण की घटनाओं मे इस तथ्य का अति सुन्दर तथा अनुग्रह से भरा वर्णन है कि पुष्पा देवी के जन्म के समय जब अम्माँ जी नितान्त अकेली थीं तो गुरूदेव ने वृद्धा स्त्री का रूप धारण कर किस अनुग्रह पूर्ण रीति से अम्माँ जी की सहायता की थी। गुरू कृपा का वर्णन सभी धर्मो तथा धर्मशास्त्रों मे है।

महात्मा तुलसी दास कृत रामचरित मानस सभी शास्त्रों तथा वेद वेदांगों की कुंजी हैं। उसके अनुसार–

" गुरू बिन भव निधि तरड न कोई।
जौ विरंचि शंकर सम होई।। "

श्रीमान् चच्चा जी के जीवन की सभी धटनाये ज्ञान नेत्रों को उन्मीलित करने वाली तथा साधना एवं सिद्धि की स्वच्छ भूमिका प्रदान करने वाली हैं, परन्तु जिन दोघटनाओं का वर्णन संस्मरण में किया गा वे जीवन के अमरत्त्व का द्वार अनावृत करने वाली तथा साधको के उत्साह वर्द्धन हेतु सुदृढ मार्ग प्रशस्त करने वाली हैं। संसार माया द्वारा निर्मित ऐसा जाल है जिसमें जीव जिस ओर झुकता है उलझता जाता है। यहाँ सब कुछ पाना सब कुछ खोना है तथा सब कुछ खोना सब कुछ पाना

है। परम पूज्यनीया अम्माँ जी महारानी चच्चा जी के साथ निरन्तर सिद्धि रूप में रहती थीं वे लोक कल्याण मार्ग को प्रशस्त करते हुये परब्रह्म सवरूप चच्चा जी महाराज की आज्ञाओं का पालन करती थीं। संस्मरण में दो घटनाओं का उल्लेख है – श्री श्री चच्चा जी महाराज की आज्ञा पालन स्त्री का पति मे पूर्ण रूपेण आस्था तथा विश्वास जमाना। प्राणों की यति गति तथा स्पन्दन में अम्माँ जी अपने पति भगवत्स्वरूप चच्चा जी महाराज के ही दर्शन करती थीं। संस्मरण भी प्रथम घटना श्री पुष्पादेवी के जन्म के बारे मे है। प्रसव के दिन थे, चच्चा जी सरकारी काम से बाहर रहते थे। श्री अम्माँ जी ने प्रार्थना की –" कुछ समय अवकाश लेंकर घर मे रहिये। शिशु जन्म उपरान्त घर का प्रबन्ध कर नौकरी पर चले जाइयेगा। श्री चच्चा जी महाराज से प्रार्थना कर जगजननी अम्माँ जी महारानी ने कुछ नही कहा तथा पति के वाक्य को परमात्मा का वरदान जान उसकी प्रतीक्षा करने लगीं। श्री चच्चा जी महाराज ने कहा आवश्यकता पड़नें पर परमात्मा स्वरूप गुरू महाराज का स्मरण कर लेना, सारी बाधायें नष्ट हो जायेंगी तथा मनोकामना पूरी होगी। श्री अम्माँ जी ने आगे कुछ नहीं कहा श्री चच्चा जी महाराज को परब्रह्म रूप में देखने वाली तथा उन्हीं की निरन्तर पूजा करने वाली श्री अम्माँ जी चच्चा जी के वाक्य मान उसी का चिन्तन मनन करने वाली भय तथा भविष्य की अनिष्ट कारिणी होनी का विचार न कर महामन्त्र की भाँति उसी का सेवन पूजन करती आगे क्या तथा हुआ यह विस्तृत

व्याख्या संस्मरण की प्रथम घटना अर्थात देवी स्वरूपा पुष्पा बहन के जन्म विवरण में लिखा गया है। इस विवरण को वेद–वाणी ही समझना चाहिये। अम्माँ जी महारानी श्रुतिसुधा तथा वेद–वाँगी ही थीं। उनके चिन्तन मनन मात्र से चारों पदार्थ मिलते है।

ऊपर ऐसी दिव्य सुधा को आह्वान कर दिया गया है, जो जीवन काल में ही चारो पुरूषार्थो की सिद्धि चाहते हैं श्रद्धा तथा विश्वास पूर्वक अध्ययन करे अवश्य ही रत्न प्राप्त होंगे।

संस्मरण मे निहित वैराग्य होने वाली घटनाओं का अध्ययन कर भक्त सारी बाधांओं से मुक्त हो जाते है।

'दशम योग'

"मातेश्वरी राधा"

मातेश्वरी चरित्र भीमांसा

मातेश्वरी राधा के चरित्र का यह योग अत्यन्त गम्भीर तथा गूढ़ है। इसमें परम सत्य का उद्घाटन है। इसका समझना मातेश्वरी की कृपा का प्रसाद मात्र हो सकता है। इसमें सारे वेद–वेदागं तथा ज्ञान शस्त्रादि की आत्मा गूढ़ गम्भीर रूप में क्रीड़ायमान है जो श्रद्धा पूर्वक चिन्मय अविनाशी तत्त्व कीा प्राप्त करने की लालसा से इसका सेवन करेंगें उन्हें मातेश्वरी के प्रसाद से सहज ही अर्थ, धर्म

मोक्ष तथा काम रूपी अलभ्य तत्वों की प्राप्ति हो जायेगी तथा वे कृत कृत्य हो जायेंगे।

मातेश्वरी के दर्शन अनेकों ने किये हैं, परंतु वास्तविकता की प्राप्ति उन्हीं को होती है, जिनकी हृदय में सत्यान्वेषण कौमुदी वास करती है तथा जो मातेश्वरी के चरणों से अद्भुत सुगन्धि से परिपूर्ण रहते हैं।मातेश्वरी राधा का प्रादुर्भाव ब्रह्मलीन महात्मा भवानी शंकर जी महाराज के सेवा पूजा के लिये हुआ है; जितना गूढ ब्रह्ममतत्वज्ञ है, जिसके परम संत महात्मा भवानी शंकर हैं, उतना ही गंभीर सच्चिदानंद सिन्धु के महान अतुलनीय तथा अवर्णनीय मातेश्वरी राधा का तत्व है; अघोषित घटना के अध्ययन चिन्तन तथा मन्थन से मातेश्वरी तथा परम तत्व में लीन श्री चच्चा जी महाराज के स्वरूप बोध की एक क्षीण आभा विम्बित होती है, जो धर्म के निगूढ तत्व को जानने जिजीविषा को उन्मीलित करती है; घटना के अनुसार श्री चच्चा जी महाराज ब्रह्म विद्या तथा परम तत्व की

गवेषणा निमित्त गृहस्थाश्रम त्याग भारतके तीर्थो तथा वन्य प्रदेशों में जाकर तपस्या करने निकल पड़े थें।

परम पूजनीया जगदवन्द्या अम्माँ जी महारानी को श्री चच्चा जी को दूसरी पत्नी के रूप में संग हुआ था। श्री चच्चा जी का यह दूसरा विवाह भगवान शकंर के जगदम्बे पार्वती जी के साथ दुसरे विवाह के तुल्य था।

अपने दूसरे विवाह के उपरान्त थोड़े दिनों बाद श्री चच्चाजी ग्रहस्थाश्रम त्याग परम तत्त्व स्वरूप अपने महिमा मण्डित भगवत स्वरूप की प्राप्ति हेतु बन में जाकर तपस्या करने का निश्चय कर चुके थे। झाँसी से चित्रकूट गये। वहाँ उन्हें ज्ञात हुआ कि वहाँ निवास करने वाले अनेकों सन्तों में एक है पं0 रामनारायण जी ब्रह्मचारी जो महान त्यागी तपस्या में ललग्न अहर्निशि योग साधना में ही जीवन यापन करते थे। श्री चच्चा जी धर्म पत्नी के साथ उनके आश्रम की खोज में लग गये। थोड़ी देर बाद देखा कि ब्रह्मचारी जी स्वयं बड़ी प्रसन्न मुद्र में उछलते कूदते श्री चच्चा जी महाराज के समीप आ विराजे। उन्होंने प्रथम ही बड़े बड़े हगों मे अश्रु पिरोये श्रद्धा पूर्वक साष्टांग प्रणाम किया तथा अत्यन्त प्रेम भरी गद्‌गद् वाणी से अभिवादन किया। श्री चच्चा जी के कुछ कथन के पूर्व ही बोले–" मेरा बड़ा भाग्य है कि आज शक्ति सहित भगवान के दर्शन हुये। ब्रह्मचारी जी युगल जोड़ी को अपने साथ कुटी में ले गये। एक कठौता मे जल लाये तथा अतिथियों के चरणोदक लिया तथा स्वस्थ चित्त से सामने बैठे गये। श्री चच्चा जी महाराज ने कहा – प्रभो हमे जो करना चाहिये था आप ने किया। हमसे अपराध हुआ ब्रह्मचारी जी ने कहा– मेरे धन्य भाग्य कि भगवान राम तथा भगवती सीताजी के दर्शन एक साथ हुये। श्री रामायण की अधो चौपाई पढ़ श्री चच्चा जी के तथा माता जी

की वन्दना की

चौ0–" तब मुनि ह्रदय धीर धरि गहि पद बारम्बार।

निज आश्रम प्रभु आनि कर पूजा विविध प्रकार।"

इसके उपरान्त ब्रह्मचारी जी आश्रम में जाकर सत्तू के तीन लड्डू बना कर लायें, तथा भोग लगा कर स्वयं प्रसाद रूप में एक लड्डू ग्रहण किया।

उपयुक्त घटनाओं से स्पष्ट है कि मातेश्वरी राधा स्वयं ब्रह्मा की पराशक्ति थीं।

पिछले पृष्ठों में उल्लिखित दो घटनाओं से स्पष्ट है कि परम पूज्य चच्चा जी महाराज साक्षात ब्रह्म ही थे तथा जगजननी अम्माँ जी महारानी उनकी आर्द्धांगिनी, सविनय तथा चिन्मयी शक्ति थी। आर्द्धांगिनी शक्ति इसलिये कहलायीं कि उनके सारे आचरण परम पूज्य चच्चा जी की रुचि के अनुसार होते थे। उनकी अपनी सत्ता अपने पति देव श्री चच्चा जी महाराज में लीन थी। वे उनमें विलीन थी। संवित शक्ति इसलिये कि उनमे होकर ही परब्रह्म का दर्शन होता था। बाहर भी भीतर भी चिन्मयी शक्ति इसलिये कि उनमें होकर ही चिदानन्द तथा ब्रह्मानन्द का अनुभव होता था। उनके चरण कमल ही जीवो को भव सागर से पार करने की दृढ़ नौका है। यदि अम्मा जी के भी विग्रह को एक पुर मान लिया जाये तो कहा जा सकता है," जगदम्बा जहँ अवतरी सो पुर बरनि न जाय। ऋद्धि सिद्धि अणिमदि सब रहीं तहाँ पर छाय।।" परम सन्त महात्मा ब्रजवासी न लाल जी अपने ग्रन्थ " श्री शंकर सन्देशम् के 'सन्त' पृष्ठ 2 पर परम पूज्य चच्चा जी महाराज की एक उक्ति उद्धृत की है जिसमें स्वयं श्री चच्चाजी महाराज ने कहा है–' सन्त अपनी तुरीय अवस्था के

सहज अनुभव में– 'आनन्दमय ब्रह्म ही है।' उसी ग्रन्थ के पृष्ठ 3 पर परम सन्त महात्मा श्री रघुवर दयाल जी महाराज के वचन है। ईश्वर साक्षात गुरूदेव के रूप मे विराजमान हैं।

परमात्मा सर्वत्र सभी रूपों में प्रगट है। माता में तो बह अपनी विशिष्ट विभूतियों सहित व्यक्त है। श्री अम्माँ जी तो गुरु माता हैं उनके स्वरूपे मे परमात्मा विशेंष विभूतियो सहित प्रगट था। करूणा, दया, ममता, इत्यादि ईश्वर की सभी विभूतियाँ अम्माँ जी महारानी मे व्यक्त थीं। जो व्यक्ति माँ की ममता, उनकी दया कृपा आदि कों पा जाता है उसके सारे भवबन्धन स्वतः नष्ट हो जाते हैं।

जाने किस पुण्य प्रताप से अथवा काल की विशेष प्रेरणा से मुझे विश्व वन्दनीया श्री अम्माँ जी की दया–दृष्टि, दीन वत्सलता मिल गई, मेरे सारे कर्म बन्धन स्वतः कट गये। श्री अम्माँ जी की क्षत्र– छाया मुझे मिल गई। मैं अपने को तृण से पर्वत अनुभव करने लगा।

जो सम्पति शिव रावणहि, दीन्ह दिये दशमान्थ।
सोइ सम्पदा विभीषणहि सकुच दीन्ह रघुनाथ।। "

बिना किसी योग जप साधना के मुझ अकिचंन को अम्माँ जी के चरणों की शरण प्राप्त हो गई। मैं अपने को सर्व सम्पदा सम्पन्ना त्रिलोकी का सम्राट अनुभव करता । जिसने बिना योग जप तप किये श्री अम्माँ जी की कृपा से सब कुछ प्राप्त कर लिया हो वह अम्माँ जी की महिमा का वर्णन कैसे कर सकता है। मेरी दृष्टि में तो सर्वत्र अम्माँ जी की महिमा का ही गान हो रहा है। श्री अम्माँ जी के ह्रदय में कृपा एवं दया का अगाघ समुद्र लहराता रहता। ब्रह्म विद्या के बारे में शास्त्र की उदघोषणा है कि यह विद्या सारी विद्याओं में श्रेष्ठ एवं शिरोमणि है। (सर्वा विद्या परा

तिष्ठा) श्री श्री अम्माँ जी मूर्तिमती वही विद्या हैं, वे सर्वभावने भगवान की सेवा पूजा करती रहती है। जो श्री अम्माँ जी की कृपा का एक अंश भी प्राप्त कर लेता है वह तरन तारन हो जाता है। श्री अम्माँ जी के प्रताप से जो मैने जाना वह यही कि सारा दृश्य –विश्व नारायण की छवि तथा शोभा का द्योतक है। तथा सारे शब्द उन्हीं के नाम की महिमा को मंडित कर रहे हैं। ऐसे भव का उदय श्री अम्माँ जी की कृपा से किसी क्षण होता है, फिर माया मण्डल की अपनी कला–बाजियाँ चलने लगती है।

श्री अम्माँ जी के दरवार मे माया की चाल नही चलती थी। ऐसा प्रतीत होता कि न कहीं संसार है न कहीं कोई समस्या स्वर्ग तथा अपवर्ग वहीं स्वयं विश्राम करते है।तथा परमानन्द की वृष्टि करते है। माँ की ममता का माधुर्य सर्वत्र व्याप्त रहता " तहाँ न माया व्यापइ योजन एक प्रयन्त। जय ध्वनि, वेद–ध्वनि करै साधक सिद्ध महन्त।।" सकल सिन्धु को मसि करै लेखनि सब बन राइ।

कोटि जन्म शारद लिखै सो छवि लिखी नजाइ।।"

श्री अम्माँ जी के चरि़त्र में तथा दर्शन में जिस ज्योति का प्रवाह बहता रहता उससे सिद्ध होता था कि उन्हों ने भूमि धेनू सुर तथा सन्तों के कल्याण के लिये अवतार लिया था। बड़े ज्ञानी, विज्ञानी तथा दिव्य चक्षु सम्पन्न ऋषि महर्षि अनुभव करते तथा कहते कि अम्माँ जी ने–

भूमि धेंनु सुर सन्त हित लीन्ह मनुज अवतार।
निज इच्छा निर्मित तनु माया गुण गो पार।। "

यह एक ध्रुव सत्य है कि सृष्टि तभी तक है जब तक यहाँ धर्म है। अम्माँ जी स्वयं धर्म का पालन करतीं तथा अपने दर्शन करने वालों के मन को ऐसा परिवर्तित कर देतीं कि वे धर्म पालन स्वतः अन्तः प्रेरणा से रूचि

लेने लगते और धीरे धीरे धर्मज्ञाता तथा धर्म के प्राण बन जाते। मौखिक उपदेश से यह उपदेश अत्यन्त प्रभावशाली तथा लोकाचार की रक्षा करने वाला था। परम पूज्य श्री चच्चा जी महाराज मूर्तिमान धर्म थे जो ज्ञान विज्ञान का नित्य एवं चिरन्तन आश्रय प्रदान करते थे। विश्व–वन्द्या अम्माँ जी महारानी उनको आधार भूमि तथा उनकी लीला कलाओं को सत्य एवं विस्तृत भूमिका तैयार करती थीं उसी क्रिया कलाप से लोक रज्जनी लीलायें होती है। जो रचना को आधार तथा धर्म प्राण प्रदान करती थीं।

परम पूज्य चच्चाजी महाराज तथा अम्माँ जी महारानी ने आजीवन धर्म की रक्षा की। वे स्वंय तो लोभ मोह राग, द्वेष आदि से मुक्त थे ही उनकी कृपा से अन्य अनेकों ने इन मानस दोषों से मुक्ति प्राप्त की तथा परम तत्त्व की प्राप्ति तथा जीवन के सहज सत्य की प्राप्ति की। कालि युग में सत्य युग की निधियों कों सुलभ बनाया तथा इस धरती को धन्य किया।

मातेश्वरी में शरणागत वत्सलता

मातेश्वरी के चरणों की छत्र–छाया सहस्त्रों ने प्राप्त की सब की अनुभूतियाँ अलग–अलग हैं, जिनका वर्णन यहाँ सम्भव नहीं है, मैने स्वयं जो अनुभूतियाँ कीं उनमें से कतिपय का वर्णन कर अपने को कृत–कृत्य करूँगा।

मैं ललितपुर हाई स्कूल में शिक्षा प्राप्त करने के निमित्त उस पुण्य–स्थली में सन् 1935 से सन् 1940 तक रहा। उन दिनों परम पूज्य चच्चा जी मुन्सफी अदालत में काम करते थे। वहीं मैं उसी मुन्सफी में सेवारत श्री शकंर सहाय जी के यहाँ रहता था। वे पूज्य पाद श्री चच्चा

जी यहाँ सत्सगं में जाते थें। मैं गोस्वामी तुलसी कृत रामायण का पाठ करता तथा भगवान राम तथा भगवती सीता जी के प्रति श्रद्धालु था। मुझे ऐसा प्रतीत होता कि वे ही मेरे पिता माता हैं। सहसा मुझे यह आभास हुआ कि भगवान राम ने श्री चच्चा जी के श्री विग्रह में तथा जगजननी श्री सीता जी ने पूजनीया अम्माँ जी के श्री विग्रह में अवतार ले लिया है। मैं तदवत ही श्री चच्चा जी तथा श्री अम्माँ जी में प्रेम करने लगा। मेरे ह्रदय से सारे भय निकल गये। ऐसा प्रतीत होता कि मैं परब्रह्म परमेश्वर की छत्र छाया में हूँ तथा मेरे सामने कोई समस्या है ही नहीं। एक दिन मैं जब आठवीं कक्षा मे पढ़ता था और चच्चा जी महाराज उरई में थे। स्मरण का बेग व्रीव था आँखां से अश्रु प्रवाहित थें। अध्यापक महोदय ने देख लिया, उन्हीं ने प्रश्न किया। 'भाई साहब आप क्या कर रहें हैं मैने कहा पत्र लिख रहा हूँ। वे क्रोधावेश में आपेसे बाहर हो गयो कहा– क्या तुम्हारा शुभ चिन्तक तथा प्रिय है जिसे पत्र लिख रहे हो। मैने स्पष्ट बता दिया तथा जो उन्होंने पढ़ाया उसे भी सही तथा स्पष्ट बता दिया। अध्यापक महोदय शान्त होगये परन्तु उन्हें घर पहुँचते ही बुखार चढ़ा वे आठ दिन का अवकाश व्यतीत कर जब पुनः पढ़ाने आये तो अन्होने मुझसे स्वये अपनी भूल मानी।

उन दिनों पूज्य पाद श्री चच्चा जी महाराज झाँसी में जजी अदालत में कार्यरत थें। मै हाईस्कूल पास कर टयुशनों के माध्यम से जीवन यापन करता था मेरे मन मे धारणा तथा दृढ़ विश्ववास था कि माँ की क्षत्र छाया मे रह कर चिन्ता करना व्यर्थ है मुझे नौकरी चाकरी की चिन्ता न थी। एक दिन अम्माँ जी ने स्वयं कहा, डाकखाने में कुछ जगह निकली है आवेदन पत्र भर दो मैं उसी विभाग में रेल डाक व्यवस्था में

अम्माँ जी की कृपा से नौकर हो गया। उनकी ग्रहस्थी पुनः स्थापित हुई। कोई अवतार , देवी ,देवता ऐसा उपकार मात्र आश्रित जान नहीं पड़ता। अम्माँ जी बड़ी दयालु, ममतामयी, शरणागत वत्सलता अनयत्र देखी नहीं जाती। उनके चरित्र अगाध हैं। ऐसी दीनवत्सलता, अन्यत्र न कहीं देखी जाती है। न सुनी जाती मै उनकी महत्व न आँक सकता हूँ न वर्णन करसकता हूँ। मै इतना ही जानता हूँ कि मेरा सारा परिवार भव सिन्धु मे डूब चुका मैं अकेला था, अम्माँ जी ने अपना लिया, मेरा विवाह करदिया तथ मुझे पुनस्थापित कर दिया।

मैने माँ के चरित्र का अति संक्षेप मे सत्रवत वर्णन किया। सविस्तार वर्णन किया जाय तो एक नई भगवती पुराण अथवा नई भागवती कथा का ग्रन्थ तैयार हो सकता हैं।

श्री अम्माँ जी महारानी की जो भी श्रद्धा सहित पूजा करेगा, उसके सारे मनोरथ सिद्ध होगें।

'एकादशम योग'

"मातेश्वरी राधा"

गीर्वाणि–प्रसादेन प्राप्तम्

मातेश्वरि–वन्दनम्

(1)

ऊँ पूर्णां पूर्ण पदस्य दीप्ति भरितां–
शर्मप्रद्यमम्बिकाम्।
राधारण्यां पति भक्ति भाव सरितं–
मुक्तिप्रदां भुक्तिदाम्।
आद्याशक्ति निभप्रभाव जननीं–
शोभामहो मण्डिताम्–
वन्दे तां परमेश्वरीमभयदां–
विद्यां परां धारिणीम्।।

(2)

निपीय यस्या महिमान्वितां कथां–
प्रफुल्लतां यान्ति बुधास्तथाऽबुधा :।
स्वकीर्ति धन्यां वसुदां शुभान्वितां–
त्रिलोक वन्द्या प्रणयाम्यहं मुदा।।

(3)

भयापहां भीम भवाब्धि तारिम्–
भवाब्धि नौकां त्रिगुणाब्धि शोषिणीम्।
शुभावहां कल्पलता गुणान्वितां–
सदैव वन्द्ये मुनि वृन्द सेविताम्।।

(4)

शिवस्य शक्ति श्शुभभावभूषितम्

ददाति सोमं गद मूल नाशकम्।

जगन्नियन्त्री जग जाल घातिनी–

ददाति मुक्तिं स्व जनाय शं प्रदाम्।।

(5)

शिवत्त्व लाभं भजते स्वयं शिवः,

भक्त्या भवत्या जगदम्बिके शिवे।

तवैव भूत्या कवयो यशास्विन–

कलां लभन्ते रवि चन्द्र सन्निभाम्।।

(6)

तव स्वरूपं श्रुति शास्त्र पारगैः–

र्न लक्ष्यते वै कविभिर्न कोबिदैः।

अजामने का मपरां हित्वा–

स्तवैव भासा गगनापगा वभौ।।

(7)

त्वमेव राधेः भव ताप हारिणी–

भवाब्धि मूला भव सिन्धु तारिणी।

कलाः समस्ता स्त्वदधीनतां गता–

स्तवैव भासा गगनापगा वभौ।।

(8)

तवांश भूता सकला विभूतय–

स्तवैब रूपं प्रथितं कलासुच।

तवाङ्घमूलेः मूले भवतारिणी शुभा–

विराजते गाङ्ग तरंग मालिका।।

(9)

न वाधिको नाथ समस्त्वया शिवे–

प्रगीयते कोऽप्यपरो मनीषिभिः।

क्षमस्व मातः मम बाल चापलं–

निजाङ्क कोणे शरणं प्रयच्छ मे।।

(10)

श्रियः पतिः शसति वैभंव तव–

सदा च स्थाणु स्तव भक्ति तत्परः।

त्वमेव भक्ताय ददासि सम्पदं–

ददासि भावं च मनश्शम प्रदम्।।

(11)

त्वमेव जाड्यं जगतो निवारिणी

जनाय कल्पद्रुम वृत्ति धारिणी।

महस्त्वदीयं नव रूप दीपकं–

शिवे त्वदीयं नव गौरवं महत्।।

(12)

दधार रूपं बहु विश्व नायक–

तवा श्रयाल्लोक हिताय् लीलया।

चकार लीलां जन लोक रज्जनी–

महत्त्व शीला तव सन्ति वृत्तयः।।

(13)

कवि र्मनीषी परिभूश्च भूपति–

र्यशो लभन्ते कृपया तवाम्बिके।

इयं विसृष्टिः कल चित्र रूपिणी–

तवाडिघ्र तेजोंश समान्विता शिवे।।

(14)

त्वमेव मायेति निगद्यते बुधैः।

पराऽपरा चैव रहस्य नामतः।

यया निबद्धाः सकला श्चरा चरा–

श्चतुर्भुज श्शेष महेश मानवाः।।

(15)

तव स्वरूपाब्धि तरग्ड़ राशिसु

निमज्जनो न्मज्जनतां गताजनाः।

युगान्त काले किल यान्ति लीनतां–

विचित्र लीला तब चित्र शालिनी।।

(16)

तवाधिड़ ध्यानं प्रहरत्यधं शिवे :-

ददाति मुक्ति स्पृहणीय सम्पदम्।

तवैव भक्तिर्भव भीति हारिणी-

त्वमेव सेव्यावरदे! सुरैस्सदा।।

(17)

स्तुवन्ति त्वां देवि तवाधिड़ सेवकाः-

प्रयान्ति ते शान्ति पदं शिवप्रदम्।

न तन्नमृत्यर्न जरा न चाधयो-

र्न कष्ट लेशं न भयं मर्च्छनम्।।

(18)

तवाधिकारे शशि सुर्य तारकाः,

समुल्लसन्तिः विहरान्ति नित्यशः।

दिनं च नक्त सुखयन्ति मानसं-

शिवात्मिके गौरवमम्दुतं तव।।

(19)

तवावतारात्सफला बभौ मही-

शुचिस्मिते चारू चरित्र शालिनि।

नवाम्बुदं श्यामलतां वियद्दधौ-

महीच शस्यामलतां त्विषां चयैः।।

(20)

स्तुताः कवीन्द्रैः रस भाव संयुताः-

रराज भूम्यां श्रुतिकाव्य कल्पनाः,

कलावपि स्वर्ण-युगस्य संपद-

दिदीपिरे लौकिक सार संकुलाः।।

(21)

प्रबुध्यमाना हरि भक्ति भावना-

ददौ जनेभ्यो विपुलं मनोमुदम्।

अपास्य चान्तः करणस्य कश्मलं-

ससर्ज वृत्तीः सुखदाश्च संस्कृता।।

(22)

भवाय लोकस्य भवाब्धि तारिणी,

स्वयंमप्रभा भाव विमोहिता सती।

कृपा दयादृष्टि युता यशस्विनी–

बभूव नारी जगदम्बिका शुभा।।

(23)

प्रतीक मात्रं तव देह धारणं–

जनस्य क्लेशाग्नि विनाशकं पयः।

त्रिवर्ग मूलं भव भीति नाशनं–

बभूव छन्दास्यपि श्वास् मारूतः।।

(24)

त्वमादि शक्तिश्शुम कारणेश्वरी–

सदाशया शम्भु पद प्रदायिनी।

त्वदीय भक्ति भवसिन्धु तारिणी–

नमामि तुभ्यं जगःविग्रहश्त्रियै प्रकाशने।।

(25)

त्वमेव मातः परमेष्ठिनः कला–

तवैव रूपं जगति प्रकाशने।

त्वदीय भक्ताः जगदेक भूषणाः–

नमामि तुभ्यं जग–विग्रह श्रियै।।

(26)

तवाश्रिताः सत्य प्रकाश कारिणः–

यशस्विनो भक्ति सुधांशु मालिनः।

निरापदास्ते विचरान्ति भू–ततो–

नमामि तुभ्यं जग–विग्रह श्रियै।।

(27)

भजन्ति त्वां देव मनुष्य दानवाः–

प्रभुत शक्तयै जगतां च भूतये।

निरञ्जिने त्वं श्रुति शास्त्र वादिनी–

नमामि तुभ्यं जग–विग्रह श्रियै।।

(28)

तव स्वरूपं प्रतिबिम्ब वर्जितं–
विकार मुक्तं प्रकृतेः परं शिवे।
त्वमेव चोंकार पदस्य, वाचिका–
नमामि तुभ्यं जग–विग्रह श्रियै।।

(29)

विचित्रमालेख्यमिंद जगत्तव–
त्वदीय सारांशमवाप्य चित्रकाः।
रचन्त्यि पूर्वाः प्रतिमा कला कृतीः–
नमामि तुभ्यं जग–विग्रह श्रियै।।

(30)

चिद्भा मात्रं नयन सुभगं हश्य विश्वं समग्रम्।
मिथ्या भासा जगति जगतां मूर्तयः भासभानाः।।
लोला लीला ललित रचना स्वप्नतुल्याऽपि रम्या।
शून्ये शून्या कलन कलिता कल्पना ते विचित्रा।।

(1)

मातेश्वरी राधा विघ्न–बाधा हर लेती सभी
ममता की धार नित्य दासों पै उँडेलतीं।
हरतीं त्रिताप देतीं भक्ति भावना अभाव,
पुण्य का प्रताप दिशि दिशि में सकेलती।
भूमि को बनातीं पुण्यं भूमि स्वर्ग सी सुभव्य,
आश्रितों की ओर ऋद्धि सिद्धियाँ ढकेलतीं।
भाग्य की विद्यायें भोग विदियायें मन्त्र मुग्ध मातेश्वरी इंगितों पै साथ साथ खेलतीं।।

(2)

आते जो शरण प्राप्त करते चरण रज,
भाग्य द्वार उनके स्वतः खुल जाते है।।
मातु मातु कहते बहाते प्रेम अश्रु धार,
सिद्धियों के पुंज पुंज पाते पुलकाते है।
स्वर्ग छवि छादित बनातीं निज वास थल,
जाते जो वहाँ वही नवीन निधि पाजें है।
दीन हीन असहाय कहते जो त्राहि माम्,
पाते माँ की ममता सुयश गान गाते है।।

(3)

स्वर्ग अपवर्ग आदि पुण्य के लिखित वर्ग–
अम्माँ की कृपा से ठौर ठौर बन जाते हैं।
कर देंती जिस पर किञ्चित कृपा की ओर,
उसकी ही ओर भाग्य भोग चले आतें है।।
पाँचों तत्त्व उसी को प्रदान करते महत्त्व,
ताज धारी उसी के सुयश गान गाते है।
देवराज देते उसे ऋद्धि सिद्धियों के पुज्जं
उसी को विधाता हरि हर सरसाते है।।

(4)

महक रही है महि मोद भरी चारों ओर
ममता की धार जहाँ माँ ने बरसाई है।
कोटि तीर्थ तुल्य हो गई पवित्र कमनीय,
भूमि वह जिसे अम्बिका ने सरसाई है।।
हो गई पवित्र पुण्य शीला वही क्षिति बृत्ति,
जिसने कभी भी कहीं माँ की कृपा पाई है,
सत्य वृत्तियों ने घेंरा माँ को जननी समान,
दिव्य दीप्तियों ने दीप मलिका सजाई है।।

(5)

सत्य पथ गामी जिसे कहते अलम्य निधि–
माँ के चरणों की रज ने उसे लुटाई है।
जिसकी कला में दीप्त कोटि कोटि अंशुमान
कोटि कोटि ऋतु पुज्जिकाओं सताई है।।
वेदों में वदित शास्त्र शसित विविध विधि
मन्त्र तन्त्र उसी कर अरूणाई है
यत्र तत्र सर्वत्र सब में समाई वही
अम्बिके त्रिलोक में तिहारी ही निकाई हौं।।

(6)

शब्द और अर्थ में तिहारी ही अपूर्व शक्ति
रचना के अंग अंग में कला तिहारी है।
मन्त्र को चलाती तूही तन्त्र कर गतिमान–
भाग्य चक्रिका कृपा ने तेरी ही सँवारी है।।
शरणागतों निमित्त कामधेंनु सी उद्धार,
तेरी कृपा चाहती सदैव सृष्टि स्पर्श है,
आश्रितों को देतीं स्वर्ग अपवर्ग सम्पदायें–
याचकों की याचना प्रंवृत्तियों को हारी है।।

(7)

प्रेरणा से अम्बे तेरी व्योंम होता गतिमान,

गतिमान सारे नित्य नई मति पाते हैं।

होनी मिट जाती अनहोनी भी सिमेट जाती,

विधि हरि हर देख दो पूल काते है।।।

तेरे भक्त तुझको मनाते पूजतें हैं तुझे,

तुझकों रिझाते तुझे भजन सुनाते हैं।

गीता और मानस के मन्त्र गाते झूम झूम,

घूम घूम यज्ञ भावनाओं को जगाते हैं।।

(8)

भाग्यहीन कर्महीन दीन जो शरण आते,

पाते अवलम्ब अविलम्ब तर जाते हैं।

गाते तेरे यशो गान तुझी को मनाते नित्य

भव पार श्रम के बिना उतर जाते है।

ऐसा अवलम्ब कहीं देखा न सुना ही गया,

जैसा तेरे चरणो में दास तेरे पाते है।

विधि हरि हर आदि होते है चमत्कृत,

करते प्रणाम तुझे तेरा यश गाते है।।

(9)

सारे सत्संगी भय मुक्त रहते सदैव,

माँ की ममता का सुख पाते पुलकाते है।

शीश पर परम समर्थ गुरूओं को देख

हीनता औ दीनता की भावना भुलाते है।

राम रघुवर के पदाज्ज हरत त्रिताप,

शकंर भवानी इति भीतियाँ मिटाते है।

राधे– बृजमोहन कमाल करते समोद,

ललक पुलक ब्रह्म ज्योतियाँ लुटाते है।।

श्री भगवती शरण दास

लेखक परिचय

जन्म : २ मई १९१९ को सुल्तानपुर जिले की मुसाफिरखाना तहसील के भनौली ग्राम में ।

पिता का नाम : स्व. श्री गंगादीन लाल।

शिक्षा : १९३३ में उर्दू की मिडिल परीक्षा मुसाफिरखाना से उत्तीर्ण की। १९३९ में ललितपुर से हाईस्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण की। १९५३ में सर्विस में रहते हुये बुन्देलखण्ड कॉलेज से बी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की।

नौकरी : २१ फरवरी १९४१ से झाँसी रेल डाक व्यवस्था (आर.एम.एस) में नौकरी आरम्भ की। परमसन्त महात्मा भवानी शंकर का सान्निध्य ललितपुर में मिला। तत्पश्चात झाँसी में गुरु महाराज एवं मातेश्वरी राधा की छत्र छाया रही। गुरुमहाराज की कृपा से ५८ वर्ष तक राजकीय सेवा में निरत रहकर १९७७ में अवकाश ग्रहण किया । आर.एम.एस. झाँसी में सेवाकाल में ट्रेडयूनियन के नेता चुने गये। पन्द्रह वर्षो तक उत्तर प्रदेश सर्किल के सेक्रेटरी पद पर आसीन रहे। बुन्देलखण्ड कॉलेज की कार्यकारिणी में कई वर्षो तक सदस्य रहे। हिन्दी, उर्दू, संस्कृत और अंग्रेजी भाषाओं में पारगंत होकर काव्य रचनायें की मेघदूत का हिन्दी अनुवाद किया जो कि शीघ्र ही प्रकाशित हो रहा है। उर्दू में भी एक पुस्तक की रचना की तथा कई स्फुट कवितायें हिन्दी भाषा में लिखीं। उर्दू, हिन्दी संस्कृत में अनेक स्फुट रचनायें कीं जो कि उत्कृष्ट कोटि की हैं। वर्तमान में पाँच पुत्रों के साथ निवास कर रहे हैं।